कुरुक्षेत्र

मार्च 1993

तीन रुपये

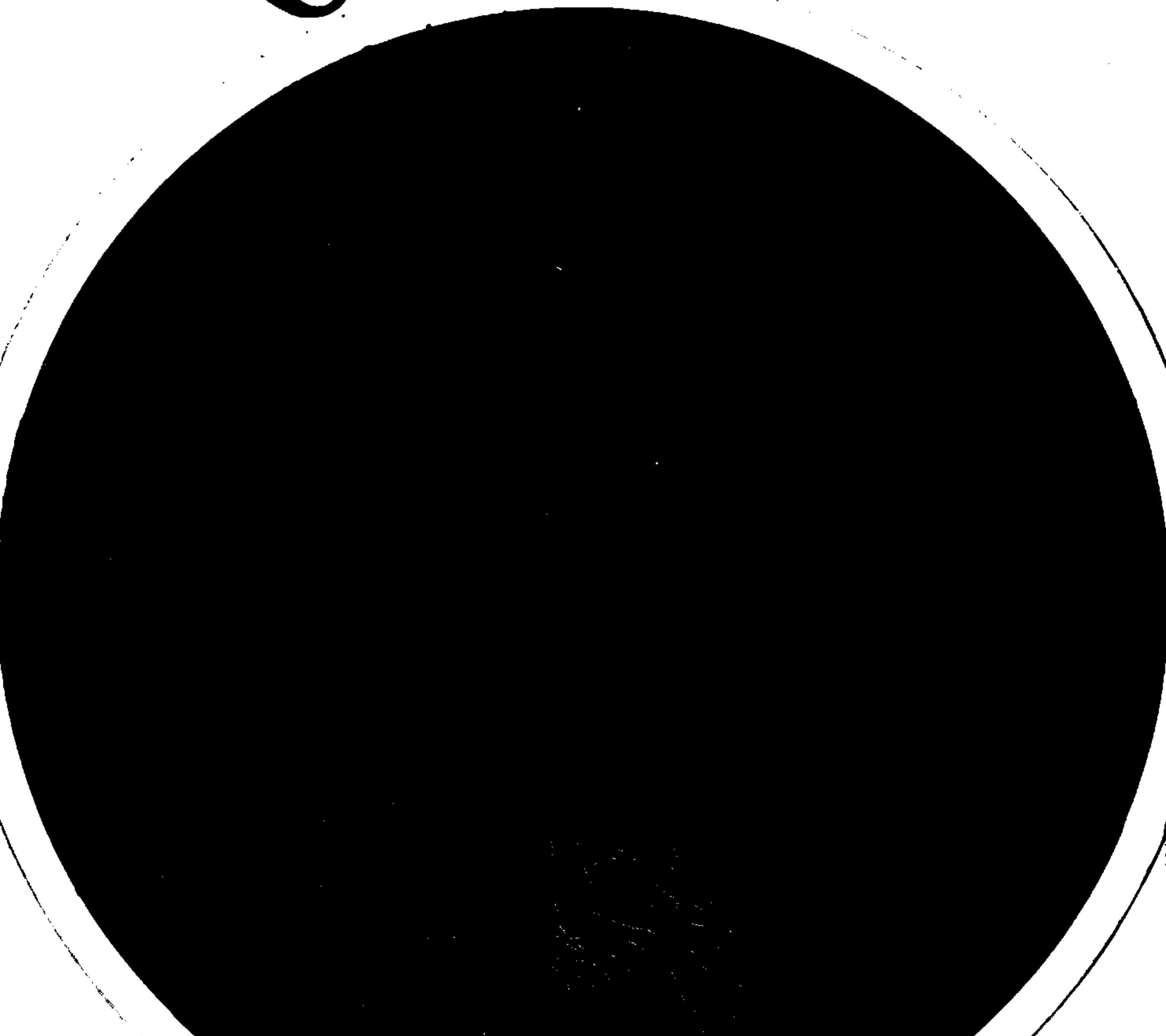

पंचायती राज के माध्यम से ग्रामीण विकास

श्री रामेश्वर ठाकुर

ग्रामीण विकास राज्य मंत्री

श्री रामेश्वर ठाकुर ने 19 जनवरी, 1993 को ग्रामीण विकास राज्य मंत्री के रूप में कार्यभार संभाला है।

श्री ठाकुर का जन्म 28 जुलाई, 1927 को हुआ। उन्होंने भागलपुर विश्वविद्यालय से बी.काम. करने के पश्चात् कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम.ए. और एल.एल.बी. की डिग्री प्राप्त की। श्री ठाकुर एक चार्टर्ड एकाउटेंट भी हैं। वह बहुत ही कम आयु में इन्स्टीट्यूट ऑफ चार्टर्ड एकाउन्टेंट्स ऑफ इंडिया, नई दिल्ली के अध्यक्ष बन गये थे। वह 1955 से 1960 तक कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्राध्यापक और 1960 से 1973 तक दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रबंध अध्ययन विभाग में विजिटिंग प्रोफेसर के पद पर पदस्थापित थे।

स्वतंत्रता आन्दोलन में श्री ठाकुर ने सक्रिय रूप से भाग लिया। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन में भाग लेते हुए वह बिहार के सन्थाल परगना जिले की राजमहल पहाड़ियों में छिपे रहे। वह 1946 में स्वतंत्रता आन्दोलन के सिलसिले में बन्दी बनाये गये और कलकत्ता में दमदम सेन्ट्रल जेल में रखे गये। श्री ठाकुर को कांग्रेस (इ) के टिकट पर बिहार से अप्रैल 1984 में राज्य सभा के लिए चुना गया। सन् 1990 में वह पुनः राज्य सभा के लिए चुन लिये गए। वह वित्त परामर्शदाता समिति, लोक लेखा समिति, राज्य सभा की विशेषाधिकार समिति आदि अनेकों संसदीय समितियों के सदस्य रह चुके हैं। उन्होंने जेनेवा में हुए भारतीय संसदीय संघ के सम्मेलन में भी भाग लिया।

ग्रामीण विकास राज्य मंत्री के रूप में उनकी नियुक्ति विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध होगी क्योंकि उन्हें अनेक व्यावसायिक पदों के साथ-साथ समिति के सदस्य और साथ ही ग्रामीण विकास मंत्रालय में ग्रामीण विकास हेतु लोक कार्यक्रम के शासी बोर्ड के सदस्य के रूप में काफी अनुभव है। श्री ठाकुर को वित्त, योजना, शिक्षा और ग्रामीण विकास से संबंधित मामलों का पर्याप्त अनुभव है जो उन्हें ग्रामीण विकास मंत्रालय में अब सौंपे गये कार्य में काम आयेगा।

श्री ठाकुर आदिवासियों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और समाज के अन्य पिछड़े लोगों के उत्थान के कार्यों में विशेष रुचि लेते हैं। उन्होंने समाज सुधार और ग्रामीण पुनर्निर्माण के कार्यों, विशेष रूप से बिहार के संथाल परगना के अत्यधिक पिछड़े जिले में, सक्रिय रूप में भाग लिया। उन्होंने गत बीस वर्षों से आदिवासियों, अनुसूचित जातियों और समाज के अन्य कमजोर वर्गों के लिए कार्य करने के साथ-साथ एक संस्थापक ट्रस्टी के रूप में गोड्डा जिले के अनेक खण्डों में सिंचाई, कृषि विकास, पशुपालन और खादी एवं ग्रामोद्योग जैसे ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों में लगी महत्वपूर्ण संस्थाओं की स्थापना की।

श्री ठाकुर ने संयुक्त राज्य अमरीका, ब्रिटेन, पूर्व सोवियत संघ, पोलैंड, बेल्जियम, फ्रांस, जर्मनी, हांगकांग, स्विटजरलैंड, इटली, मिस्र और मैक्सिको आदि देशों की यात्रा की है।

वह बंगला, संस्कृत और मैथिली भाषा तथा बिहार की सभी बोलियों के धनी हैं। उन्होंने ''बैंकिंग कास्टस इन इंडिया'' नामक पुस्तक (अंग्रेजी में) लिखी है।

श्री ठाकुर का विवाह श्रीमती नर्मदा ठाकुर से हुआ है और उनके दो पुत्र तथा दो पुत्रियां हैं।

वर्ष 38 अंक 5 फाल्गुन-चैत्र शक 1914-1915

संपादक : राम बोध मिश्र
सहायक संपादक : बलदेव सिंह मदान
उप संपादक : ललिता जोशी

विज्ञापन प्रबंधक : बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक : जसवंत सिंह
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : एडवर्ड बैक
उत्पादन अधिकारी : एम.एम. चहल
आवरण साज सज्जा : आशा सक्सेना

एक प्रति : 3.00 रु0 वार्षिक चंदा : 30 रु०

फोटो साभार : फोटो प्रभाग, रमेश चन्द्र
ग्रामीण विकास मंत्रालय

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य, चित्र आदि भेजिए। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

विषय सूची

ग्राम पंचायतों को नवजीवन देने का समय 3
डा. विश्वमित्र उपाध्याय
ग्राम स्वराज : सत्ता विकेन्द्रीकरण की ओर ऐतिहासिक कदम 6
सुभाष चन्द्र सत्य
गांव गांव में हो पंचायत 8
मोहन चन्द्र मन्टन
पंचायती राज में राम राज्य का सपना संभव 9
बासुदेव लवानियां
ग्रामीण विकास में सरपंचों की भूमिका 13
रमेश चन्द्र शर्मा
गांवों में गणतंत्र 15
वेद प्रकाश अरोड़ा
ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भमिका निभा रही हैं पंचायती राज संस्थाएं 18
राजेश कुमार व्यास
लोगों को सत्ता देने का स्वप्न साकार हुआ 20
शशि बाला
पंचायतों के माध्यम से ग्रामीण विकास 23
देवेन्द्र उपाध्याय
उजाला (कहानी) 25
दुर्गेश
पर्यावरण 26
मन्तोष पोसला
पंचायती राज : आशाएं और आशंकाएं 28
बृजेन्द्र राकेश
चिरकालीन पंचायतों को पुर्नजीवन मिला 32
यतीश मिश्र
पंचायत व्यवस्था और साक्षरता कार्यक्रम 37
डा. हीरालाल बाछोतिया
पंचायती राज : ग्राम स्वराज का श्रीगणेश 41
कृष्ण वात्स्यायन
ग्रामीण बेरोजगारों हेतु रोजगार की चुनौतिया एवं संभावनाएं 43
डा. जगबीर कौशिक

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्क नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। **दूरभाष : 384888**

सिविल सर्विसेज (प्रा.)
परीक्षा विशेषांक-1
फरवरी 1993

प्रतियोगिता सम्राट

प्रतियोगिता जगत का संपूर्ण मासिक

12/-

सभी प्रतियोगी परीक्षाओं
में निश्चित सफलता
के लिए

शुल्क :
प्रति अंक 12/- ;
वार्षिक 120/-
अपना वार्षिक शुल्क/आर्डर
निम्न पते पर भेजें :

दीवान पब्लिकेशंज़ प्रा. लि.
L-I, कंचन हाउस,
नजफगढ़ रोड कमर्शियल कॉम्पलैक्स,
नई दिल्ली-110015

श्रृंखला 1

भारतीय इतिहास

राज्यों एवं संघ लोक सेवा आयोग की प्रारंभिक परीक्षाओं के लिए सामान्य अध्ययन श्रृंखला

भारतीय इतिहास : एक नज़र में

भारतीय इतिहास : अध्ययन सामग्री

भारतीय इतिहास : वस्तुनिष्ठ परीक्षण

प्रमुख आकर्षण

- समूह-15 सम्मेलन
- ईसाई धर्म : नया विवाद
- संविधान, आरक्षण एवं उच्चतम न्यायालय
- अयोध्या प्रकरण : न्यायालय के घेरे में
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति
- मैगलन का शुक्र अभियान

सिविल सर्विसेज (प्रा.) परीक्षा
की तैयारी कैसे करें ?

सहयोगी प्रकाशन
क्रिकेट सम्राट

ग्राम पंचायतों को नवजीवन देने का समय

✍ डा. विश्वमित्र उपाध्याय

आदिम काल से मानव अपने कबीलों, जन समूहों और गांवों के बड़े-बूढ़ों, श्रेष्ठ व्यक्तियों तथा लोकप्रिय जन प्रतिनिधियों की सलाह पर चलता रहा है। ये श्रेष्ठ और लोकप्रिय व्यक्ति ही जनता की समस्याओं को सुलझाने तथा विकास संबंधी गतिविधियों को सुनियोजित करने में अग्रणी भूमिका निभाते रहे हैं। विचार विमर्श और परामर्श की इस प्रक्रिया ने भारत में सदियों पूर्व ग्राम पंचायतों का रूप ले लिया था। ये ग्राम पंचायतें जनता द्वारा स्वत: स्थापित स्वशासी संस्थाएं थीं। प्राचीन और मध्य काल में इन पर राजाओं, नवाबों, बादशाहों आदि का न कोई नियंत्रण था न हस्तक्षेप। ग्रामीण जनता निष्पक्ष, योग्य और अग्रणी व्यक्ति को पंच चुन लेती थी और उन्हें पंच परमेश्वर का उच्च दर्जा देती थी। भारतीय ग्रामीण समाज पंच परमेश्वर में कुछ हद तक आध्यात्मिक आस्था रखता था और उसके निर्णय व नियंत्रण को स्वीकार करता था। कालान्तर में भारत की स्वायत्त एवं आत्मनिर्भर ग्रामीण व्यवस्था में बड़े भूस्वामियों व धनी व्यक्तियों का दबदबा और हस्तक्षेप बढ़ता गया और पंचायतों की शक्ति कमजोर होती गयी। इस सबके बावजूद ग्राम पंचायतों का कोई न कोई स्वरूप बना रहा। परम्परागत रूप में सम्मानित व जनता द्वारा सहज ढंग से स्वीकृत ये पंचायतें ही ग्रामीण समाज पर शासन करती रहीं। आम ग्रामीण जनता इन पंचायतों के कामकाज व निर्णय से अधिकाधिक संतुष्ट रही।

भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के फलस्वरूप ग्राम पंचायतों की शक्ति कमजोर हुई। ब्रिटिश शासन के औपनिवेशिक, शोषक एवं अलोकतांत्रिक स्वरूप ने न केवल आत्मनिर्भर एवं स्वशासी गांवों को निर्धन और निर्बल कर दिया बल्कि उसने ग्राम गणतंत्र की इस प्राचीन प्रणाली पर भी कुठाराघात किये। पंचों और पंचायतों के स्थान पर गांवों में मुखिया नियुक्त किये गये। धीरे-धीरे मुखिया ब्रिटिश नौकरशाही और पुलिस के प्रतिनिधि तथा मुखबिर बन कर रह गये। जो हो, ब्रिटिश शासक भी हमारी ग्राम पंचायतों को जड़ मूल से नष्ट नहीं कर पाये। पंचायतों का कोई न कोई स्वरूप ब्रिटिश शासन में भी बना रहा। पंच परमेश्वर जनता के लिए पूज्य ही रहे। चार्ल्स मेटकाफ ने लिखा था "ऐसा लगता है कि जहां हर वस्तु समाप्त हो जाती है, वहां भी उनका (पंचायतों का) अस्तित्व बना रहता है।" सर परसिवल ग्रिफ्थ ने भारतीय लोक जीवन में पंचायतों के गरिमापूर्ण स्थान पर टिप्पणी करते हुए अपनी पुस्तक "ब्रिटिश इम्पैक्ट आन इंडिया" में लिखा है कि "इन लघु स्वशासी गणराज्यों के कारण ग्रामीण भारत में नागरिक चेतना सुदृढ़ है और जन-जीवन में शालीनता दिखाई देती है।" भारतीय नवजागरण और स्वाधीनता आन्दोलन के नेताओं ने जनता में राष्ट्रीय चेतना जागृत करने के उद्देश्य से उसे भारत के गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलाई थी। इन राष्ट्रीय नेताओं ने जनता में औपनिवेशिक ब्रिटिश शासन के शोषक स्वरूप का पर्दाफाश करते हुए जनता को यह भी बताया था कि किस प्रकार ईस्ट इंडिया कंपनी ने जमींदारी प्रथा चलाकर किसानों की जमीन छीन ली और उन्हें गरीब किसान और खेत मजदूर का जीवन जीने को विवश कर दिया। किस प्रकार लगभग हर दशक में किसानों पर भू-राजस्व की दरें बढ़ाई गयीं और ब्रिटिश माल की खपत के लिए ग्रामीण बुनकरों और अन्य कारीगरों के रोजगार छीन कर उन्हें कंगाल बना दिया गया। 19 वीं सदी के उत्तरार्ध में दादा भाई नौरोजी, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन चन्द्र पाल आदि राष्ट्रीय नेताओं ने इसी क्रम में ग्रामीण जनता को उसकी प्राचीन ग्राम पंचायतों तथा आत्म निर्भर ग्रामीण समाज व्यवस्था की भी याद [illegible] राष्ट्रीय नेताओं की मांग पर ही वायसराय लार्ड रिपन से सन् 1882 में स्थानीय स्वायत्त शासन की स्थापना के लिए प्रयास किये थे।

बीसवीं सदी में राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष के और अधिक व्यापक और जुझारू बन जाने पर महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना अबुल कलाम आजाद और सुभाष चन्द्र बोस आदि नेताओं ने ग्रामीण जनता को बार-बार विश्वास दिलाया कि स्वाधीनता प्राप्त हो जाने के बाद राष्ट्र पुनर्निर्माण का शुभारम्भ करते समय गांवों के विकास तथा दरिद्रनारायण की आर्थिक-सामाजिक मुक्ति पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। इन नेताओं ने वायदा किया था कि ग्राम पंचायतों को पुन: सक्रिय करके उन्हें गांवों के विकास और स्वशासन के लिए विशेष अधिकार व दायित्व सौंपे जायेंगे।

महात्मा गांधी की दृष्टि गांवों पर थी। वह गांवों को हर दृष्टि से गणतंत्र की प्रथम इकाई बनाना चाहते थे। गांधीजी का स्वप्न

यह था कि भारत का प्रत्येक गांव आत्मनिर्भर हो। ग्रामीण जनता की उपभोक्ता वस्तुएं गांवों में ही बनाई जायें और ग्रामवासी शिक्षित तथा सचेत हों। जनता द्वारा चुनी गयी ग्राम पंचायतें ही अपने गांव व क्षेत्र से संबंधित विकास योजनाएं बनायें और ग्राम पंचों को गांव के प्रशासन चलाने का अधिकार हो। गांधीजी ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'हिन्द स्वराज' में स्पष्ट लिखा था ''आत्मनिर्भर गांव को राष्ट्रीय ढांचे की इकाई माना जाये।'' उन्होंने अपनी पत्रिका 'हरिजन' में प्रकाशित एक महत्वपूर्ण लेख में लिखा था, ''स्वराज की मेरी कल्पना यह है कि प्रत्येक ग्राम स्वंतत्र और आत्मनिर्भर गणराज्य हो और केवल उन्हीं मामलों में दूसरे गांव, दूसरे इलाके पर निर्भर रहे जिनमें यह निर्भरता अनिवार्य है। बाकी जीवन की आवश्यक वस्तुओं के बारे में आत्म निर्भर हों। हर गांव में हमारा फर्ज है कि ग्राम के अपने इस्तेमाल के लिए अनाज वहीं पैदा हो।''

गांधीजी का यह भी विचार था कि ग्राम पंचायतों पर सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों का नियंत्रण न हो। यह पटवारी, पुलिस व अदालतों के चंगुलों से ग्रामीण जनता को मुक्त करना चाहते थे। उनका जनता की कार्य कुशलता और प्रशासनिक क्षमता में पूर्ण विश्वास था। उनका ख्याल था कि यदि पंचायतों को अच्छे ढंग से काम करने का अवसर दिया जाये और ऊपरी हस्तक्षेप न हो तो ग्रामीण प्रशासन की अधिकांश कमियां दूर हो सकती हैं। गांधीजी चाहते थे ग्राम सभाएं जनता की प्राथमिक एसेम्बलियों की तरह काम करें और वे न केवल पंचायतों के काम पर नजर रखें बल्कि सरकारी कर्मचारियों, अधिकारियों, पटवारी तथा पुलिस पर भी नजर रखें। महात्मा गांधी पंचायतों को शक्तिशाली बनाना चाहते थे। उन्होंने 26 जुलाई 1982 को 'हरिजन' में लिखा था – ''पंचायतों को कार्यपालिका, न्यायपालिका और विधायिका के अधिकार दिये जाने चाहिए।''

भारत की स्वाधीनता के बाद ग्रामीण विकास की ओर भी ध्यान दिया गया। परन्तु इस महत्वपूर्ण कार्य में पंचायतों के बजाय साम्मुदायिक विकास खण्डों, विकास अधिकारियों, नौकरशाहों, विधायकों, सांसदों और राज्य सरकारों को अधिक अधिकार दिये गये। अनेक राज्यों में ग्राम पंचायतें और न्याय पंचायतें गठित की गयीं परन्तु ग्रामीण विकास की पहल ग्राम पंचायतों के हाथ में नहीं रह गयी। ग्राम पंचायतों और उनके संसाधनों पर बड़े भूस्वामियों, नौकरशाहों और सरकारी कर्मचारियों का नियंत्रण रहा। इस भटकन का मूल कारण यह था कि केन्द्र व राज्यों की सरकारों ने त्रुटिपूर्ण कानून बनाये। नेताओं ने गांव में ही रहने वाले उन भोले भाले, मेहनती और ईमानदार प्रतिनिधियों पर विश्वास नहीं किया जिनका गांव की माटी से सीधा और पीढ़ियों का संबंध था।

इसी वजह से भारतीय संविधान का जो प्रारूप तैयार किया गया उसमें पंचायत राज को केवल संविधान के निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत रखा गया। इस प्रकार पंचायतों के गठन तथा उनके अधिकारों और दायित्वों का काम राज्य सरकारों की इच्छा पर छोड़ दिया गया। राज्य सरकारों ने गांवों में अधिकार प्राप्त जनतांत्रिक संस्थाओं (पंचायतों) के लिए ठोस कदम नहीं उठाये। महात्मा गांधी का ध्यान इस त्रुटि की ओर गया था। उन्होंने कहा था कि – ''निसंदेह यह एक भूल है। स्वाधीन भारत में जनता की आवाज सुनी जानी चाहिए। हमें तत्काल इस ओर ध्यान देना चाहिए।''

पं. जवाहरलाल नेहरू ने ग्रामीण विकास की ओर ध्यान दिया। पंचायत राज प्रणाली को सुदृढ़ और कारगर बनाने की दृष्टि से प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-1955) में 2 अक्तूबर 1952 को सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारंभ किया गया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 55 सामुदायिक परियोजनाओं की अग्रिम योजना पर अमल शुरू हुआ। दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956-1960) में ऐसी सर्वाधिक कानूनी पंचायतों का गठन किया गया जो सामुदायिक विकास परियोजनाओं और विस्तार कार्यक्रमों को लागू करने के माध्यम के रूप में काम कर सकें न कि आत्मनिर्भर स्थानीय स्वशासन की इकाईयों के रूप में।

पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा था – ''पंचायतों व ग्रामीण समुदाय को अपने कार्यक्रम स्वयं बनाने चाहिए। अब हम केवल ऊपर से काम नहीं कर सकते क्योंकि हमें लाखों लोगों का सहयोग लेकर उन्हें संगठित करना होगा और बड़ी परियोजनाओं का सहभागी व स्वामी बनाना होगा।''

परन्तु पश्चिमी देशों के ढंग पर बनाई गयी इन सामुदायिक विकास परियोजनाओं को केन्द्र और राज्यों की राजधानियों में बैठकर बनाया गया। इसमें उनमें ग्रामीण जनता की अपेक्षित भागीदारी नहीं हो सकी। गांव के बड़े जमींदारों, ठेकेदारों और खंड विकास अधिकारियों ने इन परियोजनाओं के लिए दी गयी राशि तथा कृषि सुविधाओं आदि का बहुत बड़ा भाग हड़प लिया। इनसे ग्रामीण जनता को बहुत कम लाभ पहुंचा।

पंचायत राज की कमजोरियों और सरकार की ओर से की गयी उपेक्षाओं की समय-समय पर चर्चा की जाती रही। अशोक

मेहता समिति की 1978 में आई रिपोर्ट में राष्ट्रीय स्तर पर पहली बार मांग की गयी कि पंचायत राज व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए संविधान में संशोधन करके पंचायतों को अपनी लोकतांत्रिक प्रणाली का एक आंगिक अभिन्न भाग बनाया जाये।

इस रिपोर्ट में संविधान संशोधन विधेयक का एक मसविदा भी संलग्न कर दिया गया था। अशोक मेहता समिति का एक निष्कर्ष यह था कि जिला स्तरीय अधिकारी केवल राज्य स्तर के अधिकारियों के प्रति उत्तरदायी होना चाहते हैं। वे जिला या ग्राम स्तर पर किसी भी मनोनीत या निर्वाचित संस्था के प्रति उत्तरदायी होने को तैयार नहीं है। इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगाये बिना गरीबी उन्मूलन का व्यावहारिक रूप धारण करना संभव नहीं। इन अधिकारियों को गांवों की निर्वाचित संस्था ''पंचायत के माध्यम से ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी बनाने के बाद ही लाल-फीताशाही, भ्रष्टाचार एवं भाई भतीजावाद से छुटकारा मिलना संभव है।''

ई.एम.एस. नम्बूदरीपाद ने अशोक मेहता समिति की रिपोर्ट में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था कि ''मैं चाहता हूं कि पंचायत राज के हर स्तर पर विशुद्ध चुने हुए निकाय हों। इस पुराने विचार के कारण सहयोजित सदस्य रखे जाते हैं कि पंचायत राज निकायों का संबंध केवल विकास कार्यों से है और ये समुचित स्तर पर चुने हुए निकाय नहीं है।''

अशोक मेहता समिति के बाद जी.वी.के. राव समिति और सिंघवी समिति ने भी अपनी रिपोर्टें दीं। इन रिपोर्टों में भी पंचायतों को अधिक अधिकार देने और इन्हें कानूनी रूप देने के सुझाव दिये गए।

स्वाधीनता के बाद देश के अनेक राज्यों में ग्राम पंचायतें बनी। उन्होंने कुछ कामकाज भी किया। पश्चिम बंगाल और कर्नाटक में पंचायतों को अधिक अधिकार व दायित्व सौंपे गये। इसके फलस्वरूप इन राज्यों में ग्राम पंचायतें जनता की अधिक सेवा कर सकीं और भ्रष्टाचार तथा नौकरशाही पर भी अंकुश लगा। परन्तु अधिकांश राज्यों में राजनीतिक तथा प्रशासनिक हस्तक्षेपों के कारण पंचायत राज व्यवस्था को उपेक्षित सफलता नहीं मिली। कई राज्यों में मनमाने ढंग से पंचायतों को भंग कर दिया गया और कुछ राज्यों में दस-पन्द्रह वर्ष तक पंचायतों के चुनाव नहीं कराये गये। चुनाव के बाद भी जनतांत्रिक सदइच्छाओं का गला घोंटा गया।

हाल के वर्षों में पंचायतों को सक्रिय करने और उन्हें ग्रामीण जन-जीवन में लाभकारी परिवर्तन का माध्यम बनाने की मांग ने जोर पकड़ा। सरकार ने इसके लिए संविधान में संशोधन करने तथा नया पंचायती राज विधेयक लाने का संकल्प किया।

स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने 15 अक्तूबर, 1989 को अलीगढ़ में आम सभा को संबोधित करते हुए पंचायती राज और नगर पालिका विधेयकों के बारे में चिंता प्रकट करते हुए कहा कि ''ये विधेयक आवश्यक हैं क्योंकि सरकारी योजनाओं के लाभ आम आदमी तक नहीं पहुंचते। योजनाओं के कुल मूल्य का केवल 15 प्रतिशत भाग ही वास्तविक लाभार्थियों तक पहुंच पाता है और शेष राशि लालफीताशाही के कारण बर्बाद हो जाती है।''

राजीव गांधी सरकार ने 1989 में स्वायत्त संस्थाओं को सुदृढ़ करने और उन्हें अधिक लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से संसद में 64वां और 65वां संविधान संशोधन विधेयक पेश किया। लोकसभा में 64वां संविधान संशोधन विधेयक पास हो गया परन्तु यह राज्य सभा में गिर गया। राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार ने भी सितम्बर 1990 में संविधान संशोधन विधेयक पर विचार विमर्श करवाया। नरसिंहराव सरकार ने 1991 में पंचायत राज से संबंधित 73वां संविधान संशोधन विधेयक संसद में पेश किया। इस विधेयक के द्वारा पुरानी गलतियों को दूर करके पंचायतों को संविधान के भाग 9 में रखा गया। इस विधेयक में पंचायतों को स्वशासन का निकाय कहा गया है। परन्तु इसके कामकाज को अनुच्छेद 243 (अ) और (ब) के अनुरूप विकास कार्यों तक सीमित कर दिया गया। इसमें कानून और व्यवस्था का अधिकार पंचायतों को नहीं सौंपा गया। इस विधेयक में यह व्यवस्था है कि पांच वर्ष में नियमित रूप से पंचायतों के चुनाव कराये जायें, पंचायतों की एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए सुरक्षित की जायें और अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए भी उनकी आबादी के अनुसार सीटें सुरक्षित की जायें। इसमें प्रत्यक्ष चुनाव की भी व्यवस्था की गयी है। इस विधेयक में पंचायतों के वित्तीय संसाधनों के लिए वित्त आयोग गठित करने की व्यवस्था है। निःसन्देह ये व्यवस्थाएं स्वागत योग्य है। इसमें सत्ता को आम आदमी तक पहुंचाने के लिए पहली बार ठोस प्रयास किया गया है।

इस प्रकार सत्ता का विकेन्द्रीकरण हुआ है। प्रारंभ में यह प्रावधान किया गया था कि केन्द्र सरकार वित्त आयोग गठित करे और पंचायतों के चुनाव राज्यपाल की देखरेख में हों। परन्तु विपक्ष ने इसका कड़ा विरोध किया। बाद में सरकार इस विधेयक के प्रारूप में परिवर्तन करने पर सहमत हो गयी। इस परिवर्तित

(शेष पृष्ठ 45 पर)

ग्राम स्वराज :
सत्ता के विकेन्द्रीकरण की ओर ऐतिहासिक कदम

✍ सुभाष चन्द्र सत्य

दिसम्बर 1992 के अंतिम सप्ताह में संसद ने दो ऐसे क्रांतिकारी संविधान संशोधन विधेयक पारित किए जो सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दृष्टि से हमारे ग्रामीण तथा शहरी जीवन में भारी परिवर्तन लाने वाले हैं। किन्तु आलोचना के शोर में ये दोनों महत्वपूर्ण कदम दब गए। पर इससे इन उपायों की महत्ता कम नहीं हो जाती। इन संविधान संशोधनों का उद्देश्य लोकतंत्र की मांग के अनुरूप स्थानीय स्वशासन में आम लोगों की भागीदारी को बढ़ाना है। यद्यपि इन संविधान संशोधनों की कल्पना और रचना स्वर्गीय राजीव गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में की गयी थी किन्तु विभिन्न स्वरूपों में संसद में तीन बार पेश किए जाने के बाद भी अलग-अलग कारणों से पारित नहीं हो पाये थे। संसद की सयुक्त समिति द्वारा विचार तथा अनुमोदन के बाद संसद के शीतकालीन अधिवेशन के अंतिम दिनों में ये स्वीकार किए गए।

पहला विधेयक 72 वां संविधान संशोधन विधेयक है जो पंचायती राज व्यवस्था से संबधित है और दूसरा 73 वां संविधान संशोधन विधेयक है जिसमें शहरी निकायों में जनता की भागीदारी बढ़ाने, स्थानीय स्तर पर संसाधन जुटाने के अधिक अधिकार देने, समय पर इन निकायों के चुनाव सुनिश्चित करने तथा इनमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों, जन जातियों और पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया है। इसमें एक महत्वपूर्ण व्यवस्था यह भी की गयी है कि राज्य विधान सभाएं शहरी निकायों को आर्थिक विकास की योजनाएं बनाने तथा शुल्क लगाने के अधिकार दे सकती हैं।

यद्यपि ये दोनों उपाय देश के लोकतांत्रिक ढांचे की जड़ों को मजबूत करने में सहायक हैं, किन्तु ग्राम पंचायतों से संबंधित विधेयक का महत्व अपेक्षाकृत अधिक है क्योंकि हमारे देश की 75 प्रतिशत से अधिक आबादी गांवों में रहती है और पिछले कई वर्षों से देश के अधिकतर भागों में पंचायती राज व्यवस्था चरमराने लगी थी। इसे नया जीवन देने के लिए संविधान में संशोधन करने की आवश्यकता महसूस की गयी।

लोगों की भागीदारी

महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ही स्थानीय शासन की बागडोर गांव के लोगों द्वारा स्वयं संभालने की आवश्यकता पर बल दिया था। यही कारण है कि स्वतंत्रता के पश्चात् नियोजित विकास की व्यवस्था लागू करते हुए प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने सामुदायिक विकास के माध्यम से सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में शुरूआत की। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का शुभारम्भ 1952 में हुआ और दूसरी पंचवर्षीय योजना में ग्राम पंचायतों के साथ-साथ सहकारी समितियों की सक्रिय भागीदारी पर बल दिया गया।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम को अधिक कारगर ढंग से चलाने और इसके संचालन में निचले स्तर पर लोगों का अधिक से अधिक सहयोग लेने के उपाय सुझाने के लिए 1957 में बलवंत राय मेहता समिति गठित की गयी। समिति ने देश के गांवों में परम्परागत पंचायतों को व्यवस्थित रूप देने के लिए अनेक मूल्यवान सुझाव दिये। समिति ने ग्राम पंचायतों से ऊपर पंचायत समितियां तथा जिला परिषदों का गठन करके विकास गतिविधियों में स्थानीय लोगों की भागीदारी बढ़ाने पर बल दिया। इसके अलावा बलवंत राय मेहता समिति ने पंचायत समितियों द्वारा वित्तीय संसाधन जुटाने के अनेक उपाय सुझाए। समिति ने पंचायत समिति और जिला परिषद के बीच समन्वय बनाये रखने पर जोर देते हुए इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनेक सिफारिशें कीं। पंचायत समिति के अध्यक्ष की नियुक्ति चुनाव के माध्यम से करने का सुझाव दिया गया ताकि वह आम लोगों से जुड़ा रहे। इस समिति की सिफारिशों से देश में पंचायती राज व्यवस्था का ढांचा खड़ा करने में काफी मदद मिली।

2 अक्टूबर 1959 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर शहर में एक विशाल जनसभा में पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन किया। उन्होंने इसे नए भारत के संदर्भ में अत्यंत क्रांतिकारी और ऐतिहासिक कदम बताया।

इसके बाद में अशोक मेहता समिति गठित की गयी जिसने पंचायती राज व्यवस्था की अनेक त्रुटियों तथा दुर्बलताओं को रेखांकित किया और उसके कारणों पर प्रकाश डाला। समिति ने नौकरशाहों की बढ़ती हुई भूमिका को चिंताजनक बताया तथा

स्थानीय स्वशासन को वास्तविक अर्थों में विकेन्द्रित करने की आवश्यकता पर बल दिया। समिति ने- सुझाव दिया कि विकेन्द्रीकरण की बुनियादी इकाई खन्ड/समिति स्तर पर होनी चाहिए और जिला स्तर की संस्था की भूमिका मात्र सलाहाकार की रहनी चाहिए।

इसके बाद डा. जी.वी.के. राव तथा डा. एल.एम. सिंघवी की अध्यक्षता में समितियां बनीं। इन दोनों समितियों ने भी अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिये।

नया जीवन देने का प्रयास

इन सभी समितियों की रिपोर्टों तथा पंचायती राज संस्थाओं के काम काज की समीक्षा से यह बात सामने आई कि अनेक राज्यों में अलग-अलग कारणों से ग्राम पंचायतें प्रभावहीन तथा कमजोर हो चुकी हैं। उनमें कई विकार आ गये थे जिनके कारण वे उन उद्देश्यों को पूरा नहीं कर पा रही थी जिसके लिए उनकी कल्पना की गयी थी। वर्षों तक पंचायतों के चुनाव टालते रहना, उनमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों, जन जातियों व अन्य कमजोर वर्गों का प्रतिनिधित्व न होना तथा पंचायतों पर केवल संपन्न लोगों का वर्चस्व बने रहना, वित्तीय संसाधनों का अभाव, विकास गतिविधियों का ठप्प रहना और नौकरशाहों व राज्य स्तर के राजनेताओं का हस्तक्षेप जैसी अनेक कमियों के कारण पंचायती राज व्यवस्था में जड़ता आ गयी थी। इस जड़ता को समाप्त करने तथा उसमें फिर से प्राण फूंकने के उद्देश्य से 1989 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने इस विषय को राष्ट्रीय बहस का मुद्दा बनाया और अनेक गोष्ठियों व सम्मेलनों में व्यापक विचार विमर्श के बाद संसद के बजट अधिवेशन में 64वां संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया। इस विधेयक में पंचायतों के नियमित चुनाव कराने, उनमें महिलाओं तथा कमजोर वर्गों को व्यापक प्रतिनिधित्व देने, पंचायतों की व्यवस्था के साथ-साथ पंचायतों के अधिकारों व दायित्वों को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया। विधेयक में पंचायतों की वित्तीय स्थिति मजबूत बनाये रखने के उपायों को भी निश्चित किया गया। 25 मई, 1989 को संसद में इस विधेयक को रखते हुए स्वर्गीय राजीव गांधी ने घोषणा की विधेयक में यह सुनिश्चित किया जायेगा कि पंचायती राज का स्वरूप लोकसभा और राज्य विधान सभाओं की भांति लोकतांत्रिक हो और उन्हें लोगों की प्रतिनिधि संस्थाओं के रूप में अपने कामकाज में संवैधानिक संरक्षण मिले।

कुछ राजनीतिक दलों ने इस आधार पर इस विधेयक का विरोध किया कि इससे पंचायती राज व्यवस्था में राज्य सरकारों के अधिकार कम हो जायेंगें तथा केन्द्र का प्रभाव बढ़ जायेगा। अत: यह विधेयक पारित नहीं हो सका।

1990 में जनता दल सरकार ने इस विधेयक में कुछ परिवर्तन करके नया संविधान संशोधन विधेयक संसद में रखा परन्तु उस विधेयक के पारित होने से पहले सरकार गिर गयी और पंचायती राज व्यवस्था को सुचारु बनाने का संकल्प अपूर्ण रहा। वर्तमान सरकार ने सत्ता में आने के बाद ग्राम तथा शहरी निकायों को और अधिक अधिकार देने से संबंधित संविधान संशोधन विधेयक लाने की घोषणा की और अंतत: दिसम्बर के अंतिम सप्ताह में उन्हें संसद की स्वीकृति मिल गयी।

सत्ता का विकेन्द्रीकरण

72 वें संविधान संशोधन की प्रमुख विशेषता यह है कि पंचायती संस्थाओं को सत्ता के सच्चे विकेन्द्रीकरण का माध्यम बनाया गया है। जिस प्रकार लोक सभा तथा विधान सभाएं संवैधानिक संस्थाएं हैं, उसी प्रकार पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त नहीं है जिस कारण वे स्वतंत्र रूप से काम नहीं कर सकती हैं और नौकरशाही के शिंकजे से मुक्त नहीं हो पाती हैं। सभी योजनाएं ऊपर से बनती हैं और निचले स्तर पर थोप दी जाती हैं क्योंकि योजनाएं और कार्यक्रम ऊपर से थोपे जाते हैं इसलिए स्थानीय लोगों में उनके क्रियान्वयन के प्रति कोई उत्साह नहीं होता। इस कमी को दूर करने के लिए ही आर्थिक विकास की गतिविधियों में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका बढ़ाने का प्रावधान इस विधेयक में किया गया है। इसके अलावा इसमें ग्राम, खण्ड तथा जिला इन तीन स्तरों पर पंचायती राज प्रणाली का संचालन करने प्रावधान है किन्तु ग्राम सभाएं इस प्रणाली की बुनियादी इकाई होंगी। ग्राम सभाओं के कार्यों और अधिकारों का निर्धारण संबंधित राज्यों की विधानसभाओं द्वारा किया जायेगा। इसमें सभी राज्यों के लिए यह अनिवार्य कर दिया गया है कि वे अपने यहां जिला स्तरीय पंचायत प्रणाली को लागू करें किन्तु जिन राज्यों या केन्द्र शासित प्रदेशों की जनसंख्या 20 लाख से कम है, उनमें मध्यवर्ती स्तर की संस्थाएं बनाना अनिवार्य नहीं है।

नियमित चुनाव

पंचायतों के चुनाव को लेकर बहुत अव्यवस्था बनी हुई है। इसे ठीक किए बिना पंचायती राज प्रणाली को सुचारू बनाना असंभव है। इसलिए 72वें संविधान संशोधन में इस पहलू पर

विशेष ध्यान दिया गया है। पंचायती संस्थाओं का कार्यकाल पांच वर्ष तक निश्चित कर दिया गया है। पंचायती संस्थाओं के सदस्यों तथा अध्यक्ष को प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुना जायेगा। यद्यपि विधानसभा या लोकसभा के निर्वाचित सदस्यों को इन संस्थाओं में रखा जा सकता है, किन्तु उन्हें मतदान का अधिकार नहीं होगा। पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव टालने और अपना कार्यकाल पूर्ण करने से पहले राज्य सरकारों द्वारा उन्हें भंग कर दिये जाने की प्रवृत्ति के कारण पंचायतें सही ढंग से काम नहीं कर पातीं। मौजूदा विधेयक में इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगा दिया गया है। यदि अपरिहार्य कारणों से किसी पंचायत को भंग कर दिया जायेगा तो 6 महीनों के भीतर उसके चुनाव कराने होंगे। पंचायती राज व्यवस्था के तीन स्तरों पर चुनाव निवार्चन आयोग की देखरेख में होंगे। इस प्रकार इस विधेयक के माध्यम से पंचायतों को उनका वास्तविक लोकतांत्रिक स्वरूप फिर से प्रदान करने का प्रयास किया गया है ताकि वे अपने बलबूते पर ग्रामीण क्षेत्र के विकास की योजनाएं बना सकें और लोगों को विश्वास में लेकर उनका क्रियान्वयन कर सकें।

कमजोर वर्गों का प्रतिनिधित्व

पंचायती राज संस्थाओं के काम काज के बारे में यह आम शिकायत रही है कि इनमें समाज के संपन्न तथा शक्तिशाली वर्गों का ही वर्चस्व रहता है और जो भी विकास गतिविधियां चलती हैं, उनका लाभ पिछड़े और उपेक्षित वर्गों तक नहीं पहुंच पाता। इसके फलस्वरूप समाज के कमजोर वर्ग जो कि बहुसंख्या में हैं, अपने को समूची विकास प्रक्रिया से कटा हुआ महसूस करते हैं और उसमें सहभागी नहीं बन पाते। यह स्थिति लोकतंत्र की भावना और सामाजिक न्याय के संवैधानिक लक्ष्य के एकदम विपरीत है। कमजोर वर्गों, विशेषकर महिलाओं तथा अनुसूचित जातियों और जनजातियों को पंचायती राज प्रणाली का सक्रिय अंग बनाने तथा उन्हें अपनी बात रखने का अवसर देने के उद्देश्य से पंचायती संस्थाओं में इन वर्गों के लिए उचित आरक्षण का प्रावधान किया गया है। महिलाओं के विकास की प्रक्रिया में बहुत योगदान रहता है किन्तु उनकी बात को कोई महत्व नहीं दिया जाता। इस नए प्रावधान से यह कमी दूर हो जायेगी तथा सामाजिक न्याय को भी बढ़ावा मिलेगा।

इस प्रकार इस ऐतिहासिक विधेयक से देश में सत्ता के सच्चे अर्थों में विकेन्द्रीकरण और विकास प्रक्रिया में आम लोगों की भागीदारी के माध्यम से ग्राम स्वराज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त होगा, जिसकी कल्पना महात्मा गांधी ने की थी।

1370, सेक्टर 12, आर.के. पुरम,
नई दिल्ली-110022

गांव-गांव में हो पंचायत

मोहन चन्द्र मन्टन

गांव-गांव में हो पंचायत
जो सबके झगड़े निपटाएं
आपस में जो मेल कराएं
साथ-साथ रहना सिखलाएं।

समझो इन्हें गांव की संसद
सभी समस्याएं सुलझाएं
नई-नई योजना बनाकर
गांवों में विकास जो लाएं।

जहां पंच परमेश्वर बैठें
सच्चाई का मार्ग दिखाएं
हो निष्पक्ष न्याय दिलवाएं
ग्राम राज का राज़ बताएं।

"ग्राम राज में ही स्वराज है
गांधी के सपनों का भारत
हटे गरीबी मिटे अंधेरा
जन-जन समरथ होए श्रमरत।"

ई-216, टाइप-1 क्वार्टर,
मोती बाग,
नई दिल्ली-110021

पंचायती राज से राम-राज्य का सपना सम्भव

बासुदेव लवानियां

पंचायतों की भारत में सदियों से मान्यता रही है। पंचों में परमेश्वर वास करता है, तथा वेदों में भी यह कहा गया है कि पांच व्यक्ति सामूहिक रूप से मिलकर यज्ञ को पूर्ण करें।

पंचायतें ग्राम की सम्पूर्ण व्यवस्था संभालती थीं- (1) रक्षण, (2) पोषण, (3) शिक्षण व संस्कृति का विकास करती हुई लोक संस्कृति बनाये रखती थीं। कालान्तर में पुन: पंचायतों का महत्व समझा जाने लगा। सन् 1882 व सन् 1907 में शाही विकेन्द्रीकरण आयोग की सिफारिश पर सन् 1920 में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, असम, बंगाल, बिहार, मद्रास और पंजाब में पंचायतों की स्थापना हेतु अधिनियम बनाये गये। सन् 1935 में झालावाड़ ग्राम पंचायत एक्ट तथा कोटा ग्राम पंचायत एक्ट सहित 12 रियासतों में पंचायत कानून बनाये गये।

भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में महात्मा गांधी ने 'ग्राम स्वराज्य' नामक अखबार निकाला और एक ग्राम स्वराज्य के अन्तर्गत लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना हेतु गांवों में पंचायतों की स्थापना का विचार दिया। सन् 1947 के बाद इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु भारतीय संविधान के 40 वें अनुछेद में अंकित है :--

"राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा उनको ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों।"

आधुनिक भारत में पंचायती राज आन्दोलन लगभग तेंतीस वर्ष पहले प्रारम्भ हुआ था जब भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने 2 अक्टूबर, 1959 को नागौर में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का उद्घाटन किया। यद्यपि इससे भी पहले सन् 1952 में भारत सरकार सामुदायिक विकास कार्यक्रम शुरू कर चुकी थी जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण जनता का सहयोग प्राप्त करते हुए उनके जीवन स्तर में सुधार करना था। इसके बाद जन प्रतिनिधियों को जिम्मेदारी के कार्यों में भागीदार बनाते हुए सामुदायिक विकास खण्डों का स्वरूप निर्धारित किया गया। आज देश के अधिकांश राज्यों में कानूनी रूप में पंचायती राज की स्थापना हो चुकी है।

पंचायती राज संस्थाओं के महत्व पर विचार व्यक्त करते हुए स्वर्गीया प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने कहा था - "स्वतंत्रता संग्राम के समय से ही हमारा ध्येय रहा है कि राजनैतिक निर्णयों और विकास कार्यों में ग्रामवासी हिस्सा लें। आजादी मिलने के बाद इसकी पूर्ति के लिए पंचायती राज की स्थापना की गयी ताकि विकास के लाभ कुछ लोगों तक सीमित न रहकर सभी ग्रामवासियों को मिलें। हमने ग्राम पंचायतों को एक मजबूत बुनियाद पर खड़ा करने की कोशिश की है और यह भी कोशिश की है कि वे प्रशासन की एक सक्रिय इकाई के रूप में कार्य करें। उनको गांव के लोगों के कल्याण से संबन्धित अधिकांश कार्य इसीलिए सौंपे गये हैं।"

पंचायतों द्वारा कराये जा रहे विकास कार्यों की उपयोगिता एवं महत्व इस बात पर निर्भर है कि जन चेतना की जागृति हो तथा विकास कार्य मात्र सरकारी न रहकर जनता के अपने कार्यक्रम बन सकें।

पंचायती राज एक क्रान्तिकारी कदम है लेकिन कोई भी कदम स्वयं में उद्देश्य नहीं होता, वह तो आगे बढ़ने के लिए एक साधन होता है और यदि उस साधन के द्वारा उद्देश्य तक नही पहुंचा जाये तो हमें नहीं भूलना चाहिये कि वह साधन एक बेकार साधन हो जाता है। यदि हमने जनता का उचित मार्ग-दर्शन नहीं किया एवं उनका आर्थिक स्तर ऊंचा उठाने में सफल नहीं हुए तो लोग पंचायती राज व्यवस्था में आस्था कम कर देंगे।

प्राय: देखा जा रहा है कि पंचायती राज को मात्र पंचों एवं सरपंचों प्रधानों तक ही सीमित माना जा रहा है।इस प्रवृति में परिवर्तन की आवश्यकता है तथा जन साधारण पंचायती राज को माने, इस बात की आवश्यकता है। यह तभी संभव है जब हम ग्राम सभा को प्रभावी बनाये, साथ ही पंचायती राज संस्थाओं को और अधिक शक्तिशाली एवं सम्पन्न बनाएं।

पंचायती राज के अनुभवों से पता चलता है कि इस संबन्ध में सफलतायें और असफलतायें दोनों ही मिली हैं। भिन्न भिन्न लोगों की धारणायें भी भिन्न भिन्न बनीं हैं। कुछ लोग इसे मात्र विकास कार्यक्रमों को चलाने का साधन मात्र मानते हैं, जबकि

कतिपय जन प्रतिनिधि इसे सत्ता और अधिकार प्राप्त करने का माध्यम। कमजोर वर्गों के लिए पंचायत एक अच्छे उद्देश्य से स्थापित आशाजनक माध्यम है।

पंचायती राज संस्थाओं द्वारा आज जो भूमिका निभायी जा रही है उससे सहज ही अनुमान होता है कि संस्थाओं को यदि और अधिक सुव्यवस्थित एवं सुदृढ़ बनाया जाये तो ग्रामीण जीवन के सर्वांगीण विकास की गति सहज ही आगे बढ़ सकती है। ग्रामीण कार्यक्रम का उद्देश्य गरीब लोगों, विशेष कर समाज के सबसे कमजोर वर्गों की हालत में सुधार करना है और इन कार्यक्रमों के संचालन और निगरानी में पंचायतों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग द्वारा अनेक प्रकार के विकास कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। एक तो वे जो ग्रामीण भाइयों को अपनी जीविका अर्जित करने के साधन उपलब्ध कराते हैं जैसे - समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना, अपना गांव अपना काम योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार तथा भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम। दूसरे सूखा ग्रस्त क्षेत्र विकास, मरुभूमि विकास, पहाड़ी क्षेत्र विकास तथा आदिवासी क्षेत्र विकास के कार्यक्रम और तीसरे न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति के कार्यक्रम जैसे - पेयजल, प्राथमिक शिक्षा, ग्रामीण सड़कें, विद्युतीकरण, स्वास्थ्य की देखभाल तथा उन्नत पोषण के कार्यक्रम। कुल मिलाकर ये सभी कार्यक्रम ऐसे हैं जो बिना ग्रामीण जनता की भागीदारी के सफल नहीं हो सकते।

ग्रामीण भागीदारी और जन सहयोग प्राप्त करने के लिए ग्राम पंचायतों का माध्यम ही सही और सरल सिद्ध हुआ है। ग्राम पंचायतें ही ग्राम के प्रत्येक परिवार की सही मित्र एवं मार्गदर्शक का कार्य करती हैं। इस कार्यक्रमों की प्रगति की निगरानी भी वे ही अच्छी तरह से कर सकती हैं।

इन सभी बातों से यह पता चलता है कि 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण', 'ग्राम स्वराज', या 'ग्राम का विकास - ग्राम के द्वारा' ये सभी उद्देश्य पंचायती राज संस्थानों के सही संचालन से ही पूरे हो सकते हैं पर, ये कार्य तभी पूरे होंगे जबकि पंचायती राज के प्रति हमारा विश्वास पक्का होगा।

लम्बे समय से हम पंचायती राज से निकटता से जुड़े हैं। हमारे भी कुछ अनुभव हैं। सन्देह नहीं कि चुनाव विलम्ब से होने, स्थानीय लोगों का पूरा सहयोग नहीं मिलने, अधिकारी वर्ग से वांछित मार्गदर्शन नहीं मिलने तथा चुने हुए जनप्रतिनिधियों द्वारा निजी स्वार्थों के लिए जनहित की अनदेखी करने के अनेक उदाहरण सामने आये हैं, तथापि यह मानना ही होगा कि एक ओर जहां ग्रामीण विकास के अनगिनत कार्य हुए हैं, ग्रामीण जनता में लोकतंत्र के प्रति जिस आत्म विश्वास का उदय हुआ है, वहीं दूसरी ओर ग्राम पंचायतों के सफल संचालन में पंचों एवं सरपंचों के सामने कुछ समस्यायें भी आ खड़ी हुई हैं। इनमें से कुछ प्रमुख समस्यायें इस प्रकार हैं :

कानून की जटिलता

सरपंच व पंच को अपने दायित्वों को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए विभिन्न कानून - पंचायत अधिनियम, सामान्य नियम, पंचायत समिति अधिनियम व इसके अन्तर्गत बने विभिन्न नियमों आदि और पंचायतों से संबधित भारतीय दण्ड संहिता, फौजदारी, दीवानी, साक्ष्य अधिनियम, मर्यादा अधिनियम का पढ़ना समझना भी आवश्यक होता है। इनके अतिरिक्त ग्रामीण विकास सम्बन्धी योजनाओं व उनकी शर्तों को भी उसे जानना होता है। इतने कानूनों की पुस्तकों का पंचायत में उपलब्ध होना तथा उनकी कठिन भाषा तथा शैली को समझना एक साधारण शिक्षित व्यक्ति के लिए समस्या बन जाती है जिससे वह अपने दायित्वों का पूर्ण रूपेण निर्वाह नहीं कर पाता है।

पूर्णकालिक एवं दक्ष सचिव का अभाव

वर्तमान में 4000 से अधिक जनसंख्या वाली पंचायतों को छोड़कर 2-3 पंचायतों के बीच एक ग्राम सेवक को पंचायतों का पदेन सचिव बनाया हुआ है। वह पंचायत समिति का ही कर्मचारी होता है तथा ग्राम सेवक के दायित्वों को प्राथमिकता के आधार पर निभाने को बाध्य है। वह प्राय: माह में एक सप्ताह से अधिक पंचायत के लिपिकीय कार्य को नहीं दे पाता। 2-3 पंचायतों के बीच बंटा होने के कारण किसी भी पंचायत का प्रत्यक्ष नियंत्रण उस पर नहीं रहता। इसके अतिरिक्त पंचायत विषय का विशिष्ट प्रशिक्षण भी उसे नहीं दिया जाता है।

सरकारी अधिकारी व कर्मचारियों के सहयोग का अभाव

उच्च स्तरीय अधिकारी तो लोकतंत्रीय व्यवस्था में पंचायत व अन्य पंचायती राज संस्थाओं के महत्व को समझ गये हैं और सहयोग भी दे रहे हैं, किन्तु यह स्थिति अभी निचले स्तर के अधिकारियों व कर्मचारियों के बारे में नहीं बन सकी है। राज्य सरकार के यह नीति व निर्देश है कि सम्बन्धित विकास विभागों

के ग्राम स्तरीय अधिकारी व कर्मचारी पंचायत की बैठकों में यथा-सम्भव भाग लें और अपने अपने विभाग की योजनाओं व सम्बन्धित कानूनी प्रावधानों व आदेशों के बारे में उन्हें जानकारी दें। रेवेन्यू विभाग ने पटवारी को अनिवार्य रूप से पंचायत की प्रत्येक बैठक में उपस्थित होने व पंचायत के रेवेन्यू सम्बन्धी कार्यों में सहयोग देने हेतु निर्देश दिये हैं, किन्तु व्यवहार में इसकी पालना सही प्रकार से नहीं हो रही है। नामान्तरकरण, सीमा विवाद, खेतों के रास्ते सम्बन्धी विवादों को पंचायतों में प्रवेश नहीं दिया जाता या आवश्यक रिकार्ड व परामर्श नही दिया जाता इसका फल यह होता है कि रेवेन्यू अभियान के दौरान इनकी संख्या काफी बढ़ जाती है जो पंचायत की अकर्मण्यता ही सरकार के सामने प्रदर्शित करती है।

स्वयं की आय का अभाव

पंचायत अधिनियमों में पंचायतों की आय के स्रोत निर्धारित हैं, किन्तु उनमें से कुछ एक का पंचायत स्थानीय परिस्थितियों के कारण दोहन नहीं कर पाती तथा कुछ ऐसे हैं जिनसे आय का प्रवाह बहुत ही थोड़ा या अलाभकारी होता है। कुल मिलाकर पंचायत का कोष खाली ही रहता है तथा उसको राजकीय अनुदान पर ही आश्रित रहना पड़ता है। राजकीय अनुदानों के साथ अनेक शर्तें निर्धारित होती हैं जिनके अनुरूप पंचायत को चलना पड़ता है, भले ही स्थानीय परिस्थितियों से उसका तालमेल नहीं बैठता हो। अपने साधनों के अभाव में स्थानीय जनता की अपेक्षा व आकांक्षाओं को पंचायत द्वारा पूरा कराये जाने के लिए सरपंच व पंचों को विशेष कठिन परिस्थितियों से होकर गुजरना होता है।

पंचायत के मंचों की उदासीनता

निर्वाचन होने कुछ समय तक तो पंचगण पंचायत में सक्रिय भूमिका निभाते हैं, किन्तुधीरे-धीरे वह उदासीनता की ओर बढ़ने लगते हैं। परिणामस्वरूप यह होता है कि अधिकाशं पंचायतों में सरपंच को ही सारा भार उठाना पड़ता है, जो लोकतंत्रिक पद्वति के अनुकूल नहीं है। पंचों की उदासीनता आगे चलकर क्षेत्र की उदासीनता बन जाती है तथा वहां की जनता अपने को पंचायत से दूर मान बैठती है जो पंचायती राज की भावना के लिए घातक है।

उपरोक्त समस्याओं का समाधान कुछ सीमा तक निम्न सुझावों के आधार पर हो सकता है :

1. संवैधानिक मान्यता

देश में पंचायत राज को तैंतीस साल से भी अधिक हो गये हैं तथा इसकी उपयोगिता 'तीसरी सरकार' के रूप में प्रमाणित हो चुकी है। यह देश के लोकतंत्र का अभिन्न अंग बन चुका है। इसलिये इसको भारतीय संविधान में विधिवत् मान्यता मिलनी चाहिए ताकि इसके निर्वाचन, कार्यक्षेत्र व वित्तीय साधनों का निर्धारण संवैधानिक रूप से हो सके। वर्तमान में ये बातें राज्य सरकारों पर आधारित हैं। इसके फलस्वरूप इनके निर्वाचन, कार्यक्षेत्र, वित्तीय एवं प्रशासनिक व्यवस्थाओं में एक राज्य से दूसरे राज्य में भारी अन्तर है।

2. सत्ता के साथ आर्थिक विकेन्द्रीयकरण भी हो

पंचायती राज संस्थाओं, विशेषकर पंचायतों के निजी वित्तीय स्रोत नगण्य हैं तथा राज्य सरकार से विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत प्राप्त अनुदानों पर आश्रित रहती हैं। राज्य सरकारों को चाहिये कि वे ऐसे आय के साधन इनको हस्तान्तरित करें जिससे इनकी स्वयं आय हो सके तथा जिसे वे अपने विवेक से स्थानीय जनता की अपेक्षाओं व आकांक्षाओं को पूरा करने में खर्च करने में स्वतन्त्र हों। नीचे योजना बनाना तब ही संभव होगा जब इन संस्थाओं के पास स्वयं के साधन होंगे।

3. पूर्णकालिक दक्ष सचिव की व्यवस्था हो

प्रत्येक पंचायत के पास उसका स्वयं का पूर्णकालिक दक्ष सचिव होना चाहिए ताकि पंचायत कार्यालय प्रतिदिन खुल सके और ऐसा सचिव नियमित रूप से पंचायत कार्यों व कागजात का निर्धारण कर सकें।

4. ग्राम स्तरीय सचिवालय की स्थापना हो

जिस प्रकार राज्य स्तर पर मुख्य सचिव व जिला स्तर पर जिला कलैक्टर विभिन्न विभागों के कार्यों में समन्वय करते हैं उसी प्रकार समन्वय की व्यवस्था ग्राम पंचायत स्तर पर भी होनी चाहिए। समस्त विकास विभागों के ग्राम स्तरीय कर्मचारी पंचायत के नियंत्रण के अधीन रह कर ग्राम स्तर पर कार्य करें। इन विभागों की योजनाओं को पंचायतों के माध्यम से कुशलतापूर्वक क्रियान्वयन के लिए भी यह आवश्यक है कि उनके ग्राम स्तरीय कर्मचारी पंचायत के निर्देशों के अन्तर्गत कार्य करें। इस व्यवस्था के अन्तर्गत पंचायतों को भी वांछित सहयोग मिलेगा।

5. दूसरे विभागों से प्रतिनियुक्ति की परम्परा समाप्त हो

पंचायती राज की स्थापना जब एक प्रयोग के रूप में थी उस समय पंचायत समिति स्तर पर कार्य संचालन के लिए दूसरे विभागों से व्यक्ति प्रतिनियुक्ति पर लिये जाने का औचित्य था ताकि प्रयोग असफल होने पर ऐसे अधिकारी अपने-अपने

विभागों को वापिस चले जायें। किन्तु अब 33 साल के अनुभव के बाद पंचायती राज संस्थाओं को लोकतंत्र के एक अभिन्न अंग के रूप में मान्यता दी जा चुकी है तो उसके अधीन कार्यरत अधिकारी व कर्मचारी भी स्वयं उसी की सेवा के होने चाहिए।

6. चुनाव निर्धारित समयावधि पर हों

सामाजिक परिवर्तन एक निरन्तर प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत जनता की अपेक्षायें एवं आकांक्षाये भी बदलती रहती हैं। उनके अनुसार लोकतांत्रिक व्यवस्था में नवीन जनादेश प्राप्त करना आवश्यक होता है। पूर्व के जनादेश के आधार पर कार्य करते रहने से जनता व जन प्रतिनिधियों के संबंधों में दूरी बढ़ने लगती है। नये उभरे नेतृत्व में भी कुण्ठा की भावना बढ़ने लगती है। स्वस्थ विरोध का स्थान विकृत विरोध लेने लगता है। नवीन चुनाव न होने से पुराने जनप्रतिनिधियों में स्फूर्ति व उमंग का अभाव होने लगता है। इसलिये सिवाय अपरिहार्य परिस्थितियों के चुनाव समय पर कराना लोकतांत्रिक संस्थाओं के लिए सदैव हितकारी है।

7. निरन्तर प्रशिक्षण व्यवस्था हो

पंचायती राज प्रशिक्षण व्यवस्था के लिए राज्यों में भ्रमणशील इकाइयां कार्यरत हैं जो सरपंच, पंच, उप सरपंच, न्याय उप समिति अध्यक्ष व सदस्य, न्याय लिपिक तथा ग्राम सेवकों को लघु प्रशिक्षण देते हैं। फलस्वरूप इनके पास इतना समय नहीं रहता है कि सरपंचों को एक बार 6 दिवसीय प्रशिक्षण देने के बाद दुबारा अभिनवीकरण प्रशिक्षण दे सकें। सरपंच को वर्ष में कम से कम एक बार तीन दिवसीय अभिनवीकरण प्रशिक्षण देने की आवश्यकता है। मात्र एक बार का प्रशिक्षण अपर्याप्त रहता है। प्रारम्भिक प्रशिक्षण चुनाव के तुरन्त बाद ही दिया जाता है। किन्तु उस समय वह कार्य की कठिनाइयों से परिचित नहीं होता है।

8. सरल साहित्य का प्रकाशन

विभाग द्वारा ऐसी पुस्तकों का प्रकाशन अपने स्तर से करना चाहिए जो पंचायत व पंचायत समिति एवं जिला परिषद अधिनियम व नियमों, रैवेन्यू कानूनों पर आधारित हों तथा उनकी भाषा व शैली ऐसी हो कि साधारण व्यक्ति की समझ में आसानी से आ जाये। परीक्षण , प्राथमिक शालाओं, शिक्षकों तथा ग्राम सेवकों को उपयोगी मासिक/त्रैमासिक पत्र पत्रिकायें सुलभ करायी जाएं।

9. वैज्ञानिक सर्वेक्षण या अनुसंधान की व्यवस्था

पंचायतों की समस्याओं पर वैज्ञानिक सर्वेक्षण द्वारा तथ्यों की खोज की जाये तथा समाधान हेतु विभागीय परिपत्र निकाले जायें या अन्य उपाय किये जायें। यह कार्य विभाग के किसी सरपंचों केन्द्र को सौंपा जा सकता हैं। सरकारी तंत्र के सहयोग व पंचों की उदासीनता वाली समस्या का वैज्ञानिक सर्वेक्षण प्राथमिकता के आधार पर कराया जाना चाहिए।

10. सरपंच व पंच की शिक्षा का स्तर निश्चित होना चाहिए

यह सत्य है कि पंचायती राज के प्रारम्भिक काल में ग्रामीण क्षेत्रों में पढ़े लिखे व्यक्ति सरपंच व पंच पद के लिए उपलब्ध नहीं थे, किन्तु इस अवधि में शिक्षा का विस्तार काफी हो चुका हो तथा इन पदों पर कार्य करने के लिए शिक्षित व्यक्ति मिलने में कठिनाई नहीं रहेगी। एक और जब पंचायत के कार्य व उनकी क्रियान्विति में कानून की प्रमुख भूमिका है तो दूसरी ओर उसकी क्रियान्विति करने वाला कार्यकर्ता भी शिक्षित होना चाहिए तभी क्रियान्विति भली भांति हो सकेगी। शिक्षित पंचों पर सरपंच हावी नहीं हो सकेंगे और न ही शिक्षित सरपंच पर सरकारी तंत्र।

उक्त सुझावों को अमल में लाकर पंचायती राज की कमियों को तो दूर किया ही जाना चाहिए साथ ही पंचायत स्तर पर ग्राम सभाएं वर्ष में नियमित रूप में चार बार आयोजित होनी चाहिए तथा ग्राम पंचायत का बजट, आय व व्यय का लेखा जोखा, विकास योजनाओं, वार्षिक योजना आदि विषयों पर विस्तृत चर्चा की जानी चाहिए। इन ग्राम सभाओं में सम्बन्धित ग्राम पंचायत क्षेत्र में कार्यरत सभी राजकीय, पंचायत राज कर्मचारी, सरपंच, पंच अनिवार्य रूपसे उपस्थित होने चाहिए। ग्रामीण जनता इन सभाओं में अधिक से अधिक उपस्थित हो तथा निःसकोच सक्रिय भागीदारी निभायें, तभी वास्तव में ग्राम सभा का महत्व एवं उपयोगिता होगी। इससे ग्राम पंचायत एवं सामान्य प्रशासन पर नियंत्रण बन सकेगा तथा ग्रामीण जनता को विभिन्न विकास योजनाओं की जानकारी एवं लाभ मिल पायेगा। **अत:** अन्ततोगत्वा पंचायती राज से ही गान्धी जी का 'राम राज्य' का स्वप्न साकार हो सकेगा।

प्रधानाध्यापक

रा.उ.प्रा. वि. नगला केवल (गावड़ी)

वाया जघीना (भरतपुर) राज.

ग्रामीण विकास में सरपंचों की भूमिका

✍ रमेश चन्द्र शर्मा

राजस्थान में 2 अक्टूबर 1959 को तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने नागौर में दीप प्रज्जवलित कर ग्रामीण क्षेत्र में विकास की नवीन ज्योति जलाई। उस समय पंचायत राज को लोकतंत्रिक विकेन्द्रीकरण की संज्ञा कहा गया। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए दायित्वों और अधिकारों का ग्राम स्तर तक जनप्रतिनिधियों में विकेन्द्रीकरण करने की मूलभावना निहित थी। इस कार्य के पीछे गांधीजी के ग्राम स्वराज्य की मूल प्रेरणा व स्रोत रहा है।

वर्तमान सरकारें दिल से पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त व सक्रिय बनाने को उत्सुक हैं ,परन्तु पंचायत राज का उद्देश्य केवल सरकारी योजनाओं व कार्यक्रमों की क्रियान्विति करना ही नहीं है बल्कि आवश्यकता है कि गांधीजी के सपनों को ग्राम स्वराज्य और ग्राम स्वावलम्बन के लिए सक्रिय बनाएं।

पंचायत राज की सफलता संबद्ध जन प्रतिनिधियों और सरपंचों पर निर्भर करती है। ग्राम स्वावलम्बन कभी भी परमुखापेक्षी रहकर प्राप्त नहीं किया जा सकता इसके लिए स्वप्रेरणा से पहल करनी होगी। देश में लोकतन्त्र का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि ग्रामीण जनता का शासन से कितना अधिक सम्पर्क स्थापित होता है। भारतीय संविधान अध्याय 4 अनुच्छेद 36 से 51 नीति निर्देशक तत्वों में लिखा है कि "राज्य ग्राम पंचायत के संगठन की ओर कदम उठायेगा एवं इनको पर्याप्त अधिकार प्रदत्त करके स्वायत्त शासन को सुदृढ़ शासन की इकाइयों के रूप में विकसित करेगा।"

सरपंच : पंचायत की आत्मा

ग्रामों की समृद्धि और विकास पर राष्ट्र की समृद्धि और विकास निर्भर है क्योंकि आज भी 68 प्रतिशत जनता ग्रामों में निवास करती है। गांव का सर्वांगीण विकास पंचायतों की सफलता और सक्रियता के द्वारा ही संभव है। पंचायत सक्रियता उसके नेतृत्व पर निर्भर करती हैं। सरपंच तारों के बीच चन्द्रमा की स्थिति रखता है। ग्राम नेतृत्व का भार सरपंच के कंधों पर ज्यादा निर्भर करता है। सरपंच वह धुरी है जो पंचायत को एकता प्रदान करता है तथा वह सदस्यों का निर्देशक, मित्र और दार्शनिक होता है।

पंचायत दायित्वों में वृद्धि

आज पंचायतों के दायित्वों (कार्यों) में वृद्धि हो चुकी है। सामुदायिक विकास के अनेक चरण बढ़ाये जा रहे है। सामाजिक व आर्थिक विकास की योजनाओं को घर-घर पहुंचाया जा रहा है। लोक कल्याणकारी क्षमता युक्त समाज की स्थापना के लिए हमारी वर्तमान सरकारें वचनबद्ध हैं। बलवन्त राय मेहता समिति ने राजस्थान में ग्राम पंचायतों को अधिक सक्षम बनाने के विभिन्न सुझाव दिये, इन्हें स्वीकार करते हुए नये-नये कार्यक्रमों का हस्तान्तरण ग्राम पंचायतों को किया जा चुका है।

1. स्वास्थ्य मार्गदर्शकों का आरम्भिक चयन, 2. आरक्षित वन स्थापना हेतु क्षेत्रों का चयन एवं पौध रोपड़ कार्यों में परामर्श, 3. खण्ड पम्प संसाधन 4. ग्रामीण बाजार व्यवस्था, 5. मैला व्यवस्था, 6. राजकीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम पंचायतों के माध्यम से ही संचालित किए जा रहे है जैसे ट्राइसेम योजना - ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार में प्रशिक्षण, जवाहर रोजगार योजना, अन्तयोदय योजना, अपना गांव अपना काम योजना इत्यादि।

सरपंचों के कार्य व दायित्व

राजस्थान में सरपंचों का चुनाव विधान सभाओं के समान प्रत्यक्ष मतदान द्वारा होता है। सभी वयस्क (18 वर्ष की आयु) मतदाता चुनाव में भाग लेते हैं। सरपंच व पंचों को एक साथ चुनते हैं।

सरपंच पंचायत का कार्यकारी मुखिया होता है व ग्राम सभा बैठकों की अध्यक्षता करता है। उसी की देख रेख में ग्राम पंचायत, ग्राम सभा कार्य करती है। पंचायतों के अधिकांश निर्णय बहुमत से होते हैं। सरपंच पंचायत का बजट बनाता है, उसे ग्राम सभा से पास करवाता है और पंचायत समिति को भेजता है। पंचायत कोष को सुरक्षित रखता है। ग्राम के लोगों को आवश्यक प्रमाण पत्र

देता है, ग्राम समस्याओं से सरकार को अवगत कराता है। पंचायत समिति प्रधान के निर्वाचन में भाग लेता हैं। इसके साथ अनेक अनौपचारिक कार्य भी सरपंचों के द्वारा किए जाते हैं। पंचायतों की स्थापना मात्र से ही जनतन्त्र की समस्याओं का समाधान नहीं हो जाता बल्कि देश की सामाजिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में सरपंचों द्वारा निम्न दायित्व पूर्ण किए जाने चाहिए। जैसे 1. ग्रामीण अपराधियों की खोज, पुलिस प्रशासन की मदद, 2. ग्राम सेवक, ग्राम चिकित्सक शिक्षक, चौकीदार, पटवारी और शासकीय कर्मचारियों के गलत व्यवहार व गतिविधियों की जिला कलेक्टर का सूचना देना, 3. उपभोक्ता हित संरक्षण हेतु ग्रामीण नागरिकों की समिति का गठन करना, 4. वितरण व्यवस्था पर निगरानी, 5. परिवार कल्याण के कार्यक्रमों के विकास में योगदान व प्रोत्साहन बढ़ाने में कार्य, 6. ग्रामीण जनता फसल जोखिम बीमा, बचत आदतों के निर्माण हेतु सुझाव देना, 7. वृक्ष रोपण, प्रौढ़ शिक्षा, सामाजिक रूढ़ियों के विरोध में वातावरण निर्मित करना चाहिए, 8. देहाती बैंकों से कृषकों को ऋण सुविधाएं दिलाना, 9. ग्राम में सांस्कृतिक पर्यटन क्षेत्रों की स्थिति से जिलाधीश को अवगत कराना और उनकी देख रेख का ध्यान रखना, 10. ग्रामीण क्षेत्र में लघु कुटीर उद्योग धंधों को बढ़ावा देकर, वन विकास कार्यो द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में सघन रोजगार के क्षेत्रों का निर्माण करना, स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं आंकाक्षाओं के अनुरूप विकास योजना निर्माण कार्य एवं जिलाधीश को सुझाव समय समय पर प्रेषित करने चाहिए। इससे ग्रामीण स्तर पर रोजगार सृजन के कार्यों का विकास होगा।

पंचायतों में सरपंचों की भूमिका

राजस्थान में पंचायतों की स्थापना के पश्चात पूर्व वर्षों का अनुभव पंचायतों के संदर्भ में विशेष उत्साहवर्द्धक नहीं रहा। पंचायतें लोगों में नयी उमंग व आशा का संचार करने में असफल रहीं। पंचायतों की असफलता के पीछे मूल कारण समुचित प्रशिक्षित नेतृत्व का अभाव रहा है।

सरपंचों के चुनावों के समय गांव विभिन्न राजनैतिक खेमों में विभाजित हो जाते हैं। जाति और धर्म का विशेष प्रभाव देखने को मिलता है। सरपंच पद के उम्मीदवारों में से अनेक अपने दायित्वों से अपरिचित ही रहते है। पंचायतों के सभापतित्व कार्य करते हुए कई सरपंचों ने पक्षपातपूर्ण आचरण करते हुए निष्पक्ष निर्णय में भूलें की हैं। ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद है कि कतिपय सरपंचों ने राज्य सरकार द्वारा दी जाने वाली अनुदान राशि को पूरा हड़प लिया। कहीं कहीं पर तो अपने कार्य काल में सरपंचों ने पट्टे बना दिये। कुल मिलाकर हमारी पंचायतों का मूल संकट आज समुचित नेतृत्व का ही है। ईमानदार, सेवाभावी, एवं प्रशासनिक क्षमता वाले सरपंच पंचायतों के लिए वरदान ही सिद्ध हुए हैं।

आज सरपंच कोई जमींदार, धनी सेठ, उच्चकुल का व्यक्ति नहीं बल्कि समाज सेवक हो जो सही मायने में गांवों को गतिशील नेतृत्व प्रदान कर सके। शिक्षित, योग्य, कार्यक्षमता एवं संगठन शक्ति वाला हो। साम्प्रदायिक हिंसा रहित विचार वाला सौम्य, सहयोग प्रकृति भावना वाला हो। जिसमें मानवीय गुण विद्यमान हों। घूसखोर, कालाबाजारी करने वाला न हो। ग्रामीण विकास कार्यों को उत्साह से करने वाला हो। परिवार नियोजन कार्यक्रमों का समर्थक हो, रूढ़िवादी नहीं। अस्पृश्यता भाव न रखता हो अर्थात् ईमानदार, नैतिक चरित्रवान, किसानों का मार्गदर्शक और मित्र हो। पर्याप्त शिक्षण, अनुभव, आत्मविश्वासी, दूरदर्शिता एवं दायित्व वहन भावना वाला होना चाहिए। इसके साथ ग्रामीण मतदाताओं की जागरुकता, राजनैतिक गतिशीलता, दायित्व बोध भावना भी विकसित होनी चाहिए। सही प्रतिनिधियों का चुनाव भी अपने आप में बहुत बड़ा दायित्व है। सही समय पर चुनाव होना भी महत्वपूर्ण है। जिसका आज अभाव रहा है। पंचायतों को स्वावलम्बी बनाने हेतु गांधीजी के सपनों को साकार करने के लिए उनके अधिकारों में वृद्धि भी की जानी चाहिए तभी वे स्वतन्त्र गणराज्य का कार्य सम्पन्न कर सकेंगे।

प्रवक्ता

राजनीति विज्ञान विभाग,

विनोदिनी पी.जी. महाविद्यालय,

खेतड़ी - 333503

गांवों में गणतंत्र

वेद प्रकाश अरोड़ा

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक तीनों क्षेत्रों में सच्चे-खरे लोकतंत्र की स्थापना के लिए सबसे नीचे से लेकर सबसे ऊपर तक के सभी स्तरों तक तथा शहरों और गांवों की जनता जनार्दन की सक्रिय भागीदारी अनिवार्य होती है। भारत में पूर्व सोवियत संघ की आयोजना की केंद्रीकृत प्रणाली अपनाने से योजना का सिलसिला ऊपर से शुरू होकर क्रमिक रूप से नीचे उतरता है। न योजना तैयार करने में और न उसे लागू करने में आम लोगों से सलाह करने या उन्हें योजना से किसी रूप में जोड़ने का प्रयास किया जाता है। आम लोगों को किसी पंचवर्षीय अथवा वार्षिक योजनाओं का ककहरा तक मालूम नहीं होता। देश तो बहुत बड़ी बात है, उन्हें अपने जिले, तहसील और यहां तक कि अपने गांव तक की योजनाओं और कार्यक्रमों की सूचना तक नहीं होती तब उन्हें लागू करने में वे क्या योगदान देंगे।

राष्ट्रपिता गांधी जी ने प्रत्येक कार्यक्रम में जनसाधारण को जोड़ने और ग्राम स्वराज लाने की कल्पना की थी तथा गांवों को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने की जो अवधारणा की थी, वे सब धरी की धरी रह गई है। इसी तरह स्वाधीनता प्राप्ति के बाद लोकतंत्र का विकास तो हुआ है लेकिन सभी स्तरों पर उसकी एक सी चाल नहीं रही। राष्ट्रीय और राज्य स्तरों पर लोकतंत्र की संस्थाओं-संस्थानों का राग अधिक अलापा गया नतीजन उनका विकास अपेक्षाकृत अधिक गति से हुआ तथा वे अधिक स्पंदनशील और क्रियाशील बन गई। लेकिन इनके समानांतर जिला खंड और ग्राम स्तर की लोकतांत्रिक संस्थाएं न तो कदम से मिलाकर आगे बढ़ पाई और न सुदृढ़ हो पाई। लोकतंत्र के इस एकतरफा विकास को समय समय पर ठीक करने तथा पंचायती राज को सबल बनाने के प्रयत्न किये जाते रहे हैं। लेकिन ये प्रयत्न अखिल भारतीय स्तर की तुलना में राज्य स्तर पर अधिक किए गए। 36 वर्ष पहले 1957 में बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशों के बाद महाराष्ट्र और गुजरात में मजबूत लोकतांत्रिक ढांचे स्थापित किए गये। इन राज्यों ने तीन स्तरों वाली संरचना को अपनाया, जिसमें गांवों को मूल इकाई बनाया गया। इसमें दूसरा और तीसरा स्तर क्रमशः खंड और जिले को बनाया गया। अधिकतर अन्य राज्यों ने भी इस पद्वति को अपनाया लेकिन अन्य राज्यों ने दूसरे मॉडल अपनाए। इस समय 15 राज्यों और संघ-क्षेत्रों ने तीन स्तरीय चार राज्यों ने दो स्तरीय और नौ राज्यों और संघ क्षेत्रों ने एक स्तर वाली प्रणाली अपनाई है। लेकिन समय के साथ-साथ सबसे निचले स्तर की इन संस्थाओं में अनेक विसंगतियां और विकृतियां उत्पन्न हो गई। कभी यह उपहास का तो कभी घृणा का पात्र बन गई। कहीं पर ग्रामीण समाज के आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से सुविधा सम्पन्न व्यक्तियों का इन पर इतना दबदबा कायम रहा कि ये संस्थाएं इनके इशारों पर गलत-सलत काम करने लगी और निहित स्वार्थों के हित साधना का जरिया बन गई। संविधान में बुनियादी लोकतंत्र को दफना देने के विरूद्ध कोई गारंटी नहीं थी। इन्हें समाप्त करने का काम तीसरी और चौथी योजनाओं के बीच योजना-अवकाश के दौरान सर्वाधिक किया गया। तब से अधिकतर राज्यों में पंचायतों के नियतकालिक चुनाव ही नहीं कराए गए। पंचायती राज संस्थाओं के अधिनियमों के अंतर्गत पंचायतों के आयोजना काम सौंपा गया, लेकिन व्यवहार रूप में इन्हें काम से दूर रखा और कभी जोड़ा गया तो दिखावे के लिए और वह भी आरंभ में, बेमन से।

राज्य सरकारें जिला-योजनाओं में अड़ंगा न लगा सकें और पंचायती राज की निर्वाचित संस्थाएं सही माने में सुदृढ़ हो सकें - इसके लिए एक के बाद एक कई समितियां बनाई गई और पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना को संवैधानिक मान्यता देने के प्रस्ताव किए गए। यह बात निश्चित है कि संवैधानिक संशोधन कर देने से पंचायती राज संस्थाओं को कानूनी मान्यता मिल जायेगी। तब उनसे आसानी से खिलवाड़ नहीं किया जा सकेगा।

नया संविधान संशोधन

इसी सिलसिले में अब संविधान में 72वां संशोधन तथा 73वां संशोधन किया गया है। 72वें संशोधन पंचायती राज और 73वां संशोधन शहरी स्थानीय निकायों जैसे नगरपालिकाओं के बारे में है। संसद के शीतकालीन अधिवेशन की यह एक उपलब्धि कही जा सकती है कि उसने पंचायती राज संस्थाओं के सुदृढ़ करने के 72 वें संविधान संशोधन का विधेयक पारित कर दिया। यह उपलब्धि इसलिए भी उल्लेखनीय है कि तीन सप्ताह के कटे-फटे इस अधिवेशन में राजनीतिक स्वर बहुत मुखरित रहा और

अयोध्या की घटनाओं की गूंज रह रहकर सुनाई दी। तो भी उसने यह ठोस कार्य कर दिखाया। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के कार्यकाल में बिल को सबसे पहले पेश करने के बाद लगभग साढ़े तीन वर्षों में संसद ने यह संशोधन विधेयक पास किया है। 1989 के उत्तरार्ध में लोकसभा ने तो यह विधेयक पास कर दिया था क्योंकि तब उसमें कांग्रेस का भारी बहुमत था, लेकिन राज्यसभा में कांग्रेस इस बिल के लिए काफी समर्थन नहीं जुटा सकी क्योंकि विपक्षी दलों द्वारा शासित राज्यों के इस विचार से विवाद उठ खड़ा हुआ कि इस विधेयक से उनकी स्वायतत्ता पर आंच आयेगी। कारण इसमें केन्द्र ने राज्यों की कीमत पर पंचायतों को सीधे अधिकार प्रदान किए। इसलिए यह बिल पास न हो सका। फिर राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार ने भी अपने अल्पकालिक अवधि में एक अन्य बिल रखने की कोशिश की लेकिन उन्हें भी सफलता नहीं मिली। इस टेढ़े मेढ़े सफर को तय करने के बाद कांग्रेस के लिए फिर सत्तारूढ़ होने पर पंचायती राज और नगर पालिका संविधान संशोधन विधेयक संख्या 72 और 73 एक बार फिर संसद में पेश किये गये।

औचित्य

संविधान संशोधन विधेयक लाने के पीछे यह सोच रही है कि पंचायती राज संस्थाएं एक लम्बे अर्से से अस्तित्व में रहने के बावजूद सुदृढ़ तथा उत्तरदायी जन-संस्थाओं का रूप धारण नहीं कर सकीं। इसके कई कारण रहे हैं। इनमें प्रमुख हैं : नियमित चुनाव न कराना, काफी समय तक उन्हे भंग रखकर सारा कामकाज प्रशासकों को सौंपना, कमजोर वर्गों को समुचित प्रतिनिधित्व न देना, अधिकारों का पर्याप्त हस्तांतरण न करना और वित्तीय साधनों की कमी रहना। संविधान के अनुछेच्द 40 में दिए गए राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों में कहा गया है कि राज्य ग्राम पंचायतों के गठन के लिए उन्हें ऐसे अधिकार देने के लिए कदम उठाएगी, जिससे वे स्वशासन की सशक्त इकाइयों के रूप में काम कर सकें। यह बहुत जरूरी है कि पंचायती राज संस्थाओं की कुछ मूल और नितांत आवश्यक विशेषताओं को संविधान में सम्मलित कर दिया जाए, जिससे वे सुदृढ़ और सुनिश्चित रूप लेकर अपने काम में निरंतरता बनाए रखें। इस आवश्यकता को देखते हुए ही 16 सितंबर 1991 को संविधान में 72वें संशोधन का विधेयक पेश किया गया। इसे दिसंबर 1991 में दोनों सदनों के 30 सदस्यों की संयुक्त प्रवर समिति को सौंपा गया। उसने इसमें कई सुझाव पेश किए जिससे इसे सर्वसम्मति से पास किया जा सके। समिति की रिपोर्ट जुलाई 1992 से संसद में प्रस्तुत की गई। दिसंबर 1992 को बहस के दौरान विभिन्न राजनैतिक दलों के नेताओं द्वारा दिए कुछ अन्य सुझावों को भी विधेयक में शामिल कर लिया गया।। बाद में विधेयक को संविधान के 72 वें संविधान के विधेयक के रूप में पारित कर दिया गया। इसे 22 दिसंबर 1992 को लोकसभा ने और 23 दिसंबर को राज्य सभा ने लगभग सर्वसम्मति से पास किया।

ब्योरा

संविधान में इस संशोधन के अनुसार प्रत्येक गांव में एक ग्राम सभा होगी। वह राज्य विधानमंडल द्वारा कानून के अंतर्गत प्रदत्त अधिकारों और कर्तव्यों का निर्वाह करेगी। पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने का उद्देश्य यह है कि जमीन से जुड़ी संस्थाएं जितनी सुदृढ़ और सशक्त होंगी, विकास का काम भी उतना अधिक सुचारू रूप से चलेगा। इसे देखते हुए प्रत्येक राज्य में ग्राम, मध्यवर्ती और जिला स्तर पर पंचायतें बनाई जायेंगी। पंचायती राज ढांचे में अधिक से अधिक समानता लाने के बावजूद कुछ कुछ विविधता बनी रहेगी। जिन राज्यों की जनसंख्या 20 लाख से अधिक नहीं है, उन्हें मध्यवर्ती स्तर पर कोई भी पंचायत न रखने की छूट दी गई है। पंचायतों को स्पंदनशील और सशक्त बनाने के लिए सभी स्तरों पर पंचायत सदस्यों को सीधे चुनाव से चुना जायेगा। लेकिन मध्यवर्ती और जिला स्तर पर प्रधान अप्रत्यक्ष चुनाव से चुने जायेंगे। जहां तक ग्राम पंचायत के प्रधान के चुनाव का संबंध है, उसे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कराने का निर्णय राज्य सरकारों पर छोड़ दिया गया है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण उनकी जनसंख्या के आधार पर किया जायेगा। प्रत्येक स्तर पर कुल सदस्यों में से कम से कम एक तिहाई महिलाएं होंगी और ये स्थान किसी एक पंचायत के विभिन्न चुनाव क्षेत्रों को बारी-बारी से दिए जा सकते हैं। प्रधानों के मामले में भी अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के लिए इसी तरह के आरक्षण की व्यवस्था की गई है जिससे उन्हें पंचायती राज संस्थाओं में समुचित प्रतिनिधित्व मिल सके और वे अनुभव प्राप्त कर सकें। प्रत्येक पंचायत का कार्यकाल पांच वर्ष होगा लेकिन किसी विशेष कारण से और वह भी राज्य कानून के अंतर्गत किसी पंचायत को पहले भंग किया जा सकता है। लेकिन सामान्य अवधि के समाप्त होने से पहले भंग करने की स्थिति में उस तारीख से छह महीने के अंदर पंचायत के चुनाव पूरा करा देने होंगे। वर्तमान पंचायती राज संस्थाएं वित्तीय साधनों के अभाव में मुरझा सी जाती हैं। इस कमी को दूर करने के लिए राज्य विधान

मंडल पंचायतों को समुचित स्थानीय कर लगाने और उगाहने के अधिकार दे सकते हैं। साथ ही वे राज्य की संचित निधि से पंचायतों को सहायता अनुदान देने की व्यवस्था कर सकते हैं। इसके अलावा पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा के लिए तथा राज्य और स्थानीय निकायों के बीच धनराशि के वितरण की उपयुक्त सिफारिशें करने के लिए प्रत्येक पांच वर्ष में एक वित्तीय आयोग बनाया जायेगा। केन्द्रीय वित्त आयोग राज्य की संचित निधि बढ़ाने के लिए आवश्यक उपाय सुझायेगा, जिससे राज्य विशेष की पंचायतों के साधनों में वृद्धि की जा सके। पंचायती राज संस्थाओं को अपने बढ़ते अधिकारों के साथ ही अब अधिक जिम्मेदारियां निभानी पड़ेगी। उदारीकरण के परिवर्तित माहौल में उन्हे विकास कार्यों के लिए अधिक धनराशि का व्यय करना पड़ेगा। दूसरे शब्दों में पंचायती राज संस्थाओं के लिए अधिक धन सुनिश्चित किया जा सकेगा। इससे योजना प्रक्रिया में आम लोगों की भागीदारी भी बढ़ सकेगी। साथ ही पंचायती राज संस्थाओं की स्वायत्तता और सत्ता का काफी विस्तार होगा। वित्तीय साधनों में इस वृद्धि के अलावा इस संविधान संशोधन के अंतर्गत संविधान की ग्यारहवीं सूची में उल्लिखित कुछ काम पंचायतों को सौंपे जा सकते हैं। इसके साथ-साथ राज्य सरकारें आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की कोई भी अन्य योजना पंचायतों को सौंप सकती हैं। निरंतरता को बनाए रखने के लिए विधेयक में व्यवस्था की गई है कि संविधान संशोधन के इस अधिनियम के लागू होने से पहले जो पंचायतें मौजूद थीं, वे अगर सम्बद्ध विधान सभा द्वारा भंग न की गई हों, तो वे अपना कार्यकाल पूरा करेगी। राज्य विधान मंडलों को भी इस अधिनियम के लागू होने के बाद हद से हद एक वर्ष का समय अपने पंचायत अधिनियमों में आवश्यक संशोधनों के लिए दिया जायेगा, जिससे वे इन्हें संविधान के प्रावधानों के अनुकूल बना सकें। संविधान संशोधन अधिनियम समान रूप से देश भर में लागू होगा। अनुच्छेद 244 के अंतर्गत केवल अनूसुचित जाति-क्षेत्र और जनजाति-क्षेत्र, पूर्वोत्तर के कुछ राज्य जैसे नगालैंड, मेघालय और मिजोरम तथा कुछ पर्वतीय क्षेत्र इससे मुक्त रहेंगे। इस संशोधन को ध्यान में रखते हुए तथा इसकी मूल बातों को अक्षुण्ण रखते हुए राज्य सरकारों को अपने यहां मजबूत पंचायती राज के लिए अपने अपने कानून बनाने की आज़ादी होगी। तत्कालीन ग्रामीण विकास राज्य मंत्री श्री जी.वैंकटस्वामी के अनुसार कुछ दलों द्वारा आपत्ति प्रकट किये जाने के कारण ग्राम सभाओं को कुछ न्यायिक अधिकार सौंपने की सरकारी कोशिश सफल नहीं हो सकी तो भी विधेयक में किए गए अनेक उपायों से सही-सही लोकतांत्रिक विकेंद्रित प्रणाली कायम करने में बहुत सहायता मिलेगी।

परिणाम और लाभ

72 वें संविधान संशोधन से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों और विशेषरूप से जवाहर रोजगार योजना को बल मिलेगा। जवाहर रोजगार योजना का बुनियादी सिद्धांत यह है कि इस योजना के अंतर्गत सुनिश्चित धनराशि प्राप्त ग्राम पंचायतें यह निर्णय करेंगी कि वे अपने गांव के लिए किन योजनाओं को हाथ में लेंगी। अब पंचायत स्तर पर निर्वाचित तथा मतदाताओं के प्रति जवाबदेह संस्थाएं जवाहर रोज़गार योजना के कामों के क्रियान्वयन में अधिक दिलचस्पी लिया करेंगी। स्वर्गीय श्री राजीव गांधी ने जवाहर रोज़गार योजना और पंचायती राज विधेयक को लाकर जिस प्रक्रिया को शुरू किया था, वह अब अपनी तार्किक परिणति तक पहुंच गई है। पंचायती राज कानून बन जाने से अब ग्रामीण विकास क। बहुत सी नई योजनाएं आरंभ की जा सकेंगी और साथ ही योजनाएं बनाने और लागू करने में लोगों की भागीदारी बढ़ सकेगी। इस अधिनियम के संदर्भ में आठवीं योजना में ग्रामीण विकास के लिए निर्धारित राशि बढ़ाकर 3 अरब रुपए कर देने का महत्व भी बहुत बढ़ गया है। इस अधिनियम ने जन साधारण को सत्ता सौंपने के श्री राजीव गांधी के सपने को पूरी तरह साकार कर दिया है। अब यहां पचांयतें संविधान में उल्लिखित किसी भी अन्य लोकतांत्रिक संस्था की तरह नियमित रूप से अपना अस्तित्व बनाए रख सकेंगी, वहां उन्हें आम लोगों के आर्थिक विकास कार्यक्रमों को लागू करने के लिए यथेष्ट पूंजी उपलब्ध होगी। व्रह जन-इच्छाओं व अभिलाषाओं को अभिव्यक्त और मुखरित करेंगी और भारतीय राजतंत्र का तीसरा स्तर या यूं कहें पहला प्रभावी स्तर प्रमाणित होंगी। साधन-स्रोतों में कोई कमी न आने देने के लिए वित्त आयोगों और पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव ठीक से और नियमित रूप से कराते रहने तथा किन्हीं कमियों-खामियों के घुस आने पर उन्हे दूर करने के लिए चुनाव-आयोगों का समय-समय पर गठन बुनियादी लोकतंत्रों को सबल बनाने तथा ग्राम स्वराज की चिरपोषित परिकल्पना को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में योगदान करेगा। इससे सत्ता के दलालों की दाल या तो गलेगी नही या फिर वह गलनी कठिन हो जायेगी।

268, सत्यनिकेतन, मोती बाग,
नानकपुरा, नई दिल्ली - 110021

ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं पंचायती राज संस्थाएं

राजेश कुमार व्यास

भारत गांवों का देश है। देश की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में ही निवास करती हैं। अत: ग्राम विकास देश की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। सरकार ने गांवों के विकास हेतु योजनाएं क्रियान्वित की है। उनमें से ही एक है – पंचायती राज प्रणाली। पंचायती राज प्रणाली कोइ नई योजना नहीं है। बल्कि देश की आजादी से पूर्व भी इस योजना को क्रियान्वित करने का प्रयास किया जा चुका है। स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने इस प्रणाली के संबंध में कहा था कि नये भारत के संदर्भ में यह सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी और ऐतिहासिक कदम हैं। पंचायती राज से अभिप्राय है कि प्रत्येक गांव में लोकतंत्र या प्रजातंत्र होगा, जिसको सारे अधिकार होंगे। हर गांव आत्म निर्भर हो, उसे अपनी समस्याओं के समाधान में सक्षम होना चाहिए।

ग्राम पंचायत, पंचायत राज का प्रथम स्तर है। ग्राम पंचायत में 5 से लेकर 13 तक सदस्य हो सकते हैं, इन सदस्यों को पंच कहते हैं। पंचों का चुनाव गुप्त मतदान के द्वारा होता है। ग्राम पंचायत, पंचायत समिति के लिए अपना प्रतिनिधि चुनती है। पंचायत समिति पंचायत राज का माध्यमिक स्तर है, यहां पंचों द्वारा चुने प्रतिनिधि ही होते हैं। पंचायती राज का तीसरा स्तर जिला परिषद् होता है। जिला परिषद् 3 से 5 वर्ष काल का होता है।

पंचायती राज की ग्रामीण विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। पंचायती राज में ग्राम स्तर पर ही पंचायतों द्वारा अपनी समस्याओं को हल करने के लिए तथा अपने क्षेत्र में विकास कार्यो के लिए योजनाएं बनाई जाती हैं ताकि जनसाधारण को अपनी समस्याओं के समाधान हेतु दौड़ भाग न करनी पड़े।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात स्थानीय स्वायत्त शासन और जनतंत्रीय विकेन्द्रीकरण पर विशेष बल दिया गया है। देश में पंचायती राज लाने के लिए संविधान के अनुच्छेद 10 के अंतर्गत पंचायतों की स्थापना की गयी। 12 जनवरी, 1959 को राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में पंचायत समितियों का अनुमोदन किया गया, फलत: 2 अक्तूबर 59 को पंचायती राज की व्यवस्था की गयी। सर्वप्रथम राजस्थान में तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. नेहरू ने नागौर जिले में पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन किया था। राजस्थान के बाद आन्ध्र प्रदेश, असम, मद्रास, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, प. बंगाल और बिहार में इस योजना को प्रांरभ किया गया।

पंचायती राज के अंतर्गत कृषि विकास, पशुधन विकास, उद्योग विकास, सार्वजनिक स्वास्थ्य कल्याण, कच्ची-पक्की सड़कों का निर्माण, सहकारिता विकास शिक्षा का विकास, वृक्षारोपड़, चरागाह व भूमि प्रबन्ध आदि विकास कार्यों को करने का बीड़ा उठाया गया। इसके अतिरिक्त प्राथमिक पाठशालाओं, औषधालयों, शिशु कल्याण केन्द्र, बीज भण्डार और वितरण केन्द्रों के लिए पंचायतों ने न केवल भूमि दी बल्कि अपने सीमित धन से व जनता से दान एकत्रित करके इनके निर्माण में भूमिका निभाई। पंचायती राज प्रणाली के अंतर्गत कई प्रकार के विकास कार्य किये गये।

हरित क्रान्ति श्वेत क्रान्ति, छूआछूत की भावना, अंधविश्वासों से उपर उठकर जन चेतना की जागृति करने में पंचायती राज संस्थाओं का ही तो योगदान है। पंचायती राज संस्थाओं द्वारा जन चेतना जागृत की गयी ताकि मनुष्य समाजिकता से ऊपर उठकर विकास कार्य में सहयोग करें।

लोगों में राष्ट्रीय. सामाजिक एवं राजनैतिक चेतना जागृत करने में पंचायती राज संस्थाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। एकता, आत्मविश्वास आत्म सहायता आदि को जागृत करने में भी पंचायती राज संस्थाओं का योगदान काफी महत्वपूर्ण है। गांवों के नवयुवकों, महिलाओं और बच्चों को स्वैच्छिक संस्था के रूप में खड़ा करने एवं उनमें आत्मविश्वास की भावना भरने में पंचायती राज संस्थाएं महत्वपूर्ण कार्य करतीं हैं। पंचायती राज संस्थाओं को अगर प्रजातन्त्र की प्रथम पाठशाला कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। ये संस्थाएं ग्राम विकास की ओर तेजी से कार्य कर रही हैं।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पंचायती राज प्रणाली महत्वपूर्ण कार्य कर रही है, जिनमें पशुपालन, डेरी उद्योग, मुर्गी पालन और मत्स्य पालन आदि महत्वपूर्ण कार्य हैं। पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण भारत की प्रतिदिन की आवश्यकताओं को पूरा करने में भी महत्वपूर्ण प्रयास कर रही है। आवास, पीने का पानी, ईंधन और चारे की उपलब्धि पंचायती राज संस्थाओं द्वारा करायी जा रही है। पंचायती राज व्यवस्था से गांवों से गरीबी को हटाने के लिए अनेक ग्रामीण विकास योजनाएं भी बनायी गयी। पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम, मरूभूमि विकास, विशेष पशु प्रजनन, स्वरोजगार आदि विकास कार्यक्रमों के माध्यम से गांवों का विकास किया गया। जिन राज्यों में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की देखरेख पंचायतों के माध्यमों से की गई वहां विकास कार्यक्रम का बेहतर तालमेल रहा है तथा वहां पर गरीबी कम करने में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

वर्तमान में समन्वित ग्रामीण विकास योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, प्रौढ़ शिक्षा, ट्राइसेम योजना, आवासीय योजनाएं, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार कार्यक्रम, महिला उत्थान योजना, सामाजिक वानिकी योजना आदि योजनाओं में लाभार्थी का चयन करने में योजना के संचालन हेतु समुचित स्थान देने व योजनाओं को क्रियान्वित करने में पंचायती राज संस्थाएं महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

गांवों के बहुमुखी विकास करने में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। पंचायती राज संस्थाएं गांवों में ग्रामीण विकास आदि के कई महत्वपूर्ण कार्यों को क्रियान्वित कर रही हैं। वर्तमान में पंचायती राज संस्थाएं जन जागृति में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभा रही हैं। ये संस्थाएं नागरिकों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करके प्रजातन्त्र की स्थापना कर रही हैं।

राजनैतिक दृष्टिकोण से पंचायती राज संस्थाओं ने नागरिकों को जहां जागृत किया है वहीं प्रशासनिक दृष्टिकोण से इस व्यवस्था ने अफसरशाही और आम जनता के बीच अन्तराल को कम किया है। विकास के दृष्टिकोण से पंचायती राज संस्थाओं ने ग्रामीण लोगों में विकसित होने की मनोवैज्ञानिकता भरी है। आर्थिक दृष्टिकोण से इन संस्थाओं ने हरित क्रान्ति के चमत्कारों से खेतों में पैदावार को बढ़ाया है। गरीबी को कम करने में भी इन्हीं संस्थाओं का योगदान है।

हालांकि पंचायती राज व्यवस्था में कई दोष भी विद्यमान है परन्तु इसके लाभों को दृष्टिगत रखते हुए इसके दोष नगण्य कहे जा सकते हैं। पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण विकास की एक महत्वपूर्ण इकाई है। इस व्यवस्था ने गांवों के विकास को एक नया मोड़ दिया है। कृषि को जीविकोपार्जन के साधन मात्र से वाणिज्योन्मुख मोड़ का श्रेय पंचायती राज को ही है।

सह संपादक 'मरु व्यवसाय चक्र' पत्रिका,

धर्मनगर द्वार के बाहर,

बीकानेर - 334004 (राज.)

पंचायत भारत की प्राचीनतम संस्था है, इसलिए उसका फिर से प्रचलन देश में कोई नई बात नहीं होगी।

–महात्मा गांधी

लोगों को सत्ता देने का स्वप्न साकार हुआ

✍ शशि बाला

यूं तो पंचायतों को मान्यता देने, उन्हें शक्तियां सौंपने की बात स्वतंत्रता से भी पहले से की जाती रही है। सन् 1931 से लेकर 1948 तक महात्मा गांधी पंचायतों को अधिकार दिलाने के बारे में जन अभियान छेड़ने के प्रयास करते रहे। उन्होंने कहा था कि देश की स्वंतत्रता नीचे से शुरू होनी चाहिए। न्याय करने का काम ग्राम पंचायतों का होगा। किसान को न्याय पाने के लिए अपने पसीने की गाढ़ी कमाई व्यर्थ नष्ट नहीं करनी पड़ेगी।

स्वतंत्र भारत के पहले प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने कहा था, "भारत तभी प्रगति करेगा जब गांवों में रहने वाले लोग राजनीतिक दृष्टि से सजग हो जायें।" हमारे देश की प्रगति हमारे गांव की खुशहाली से जुड़ी हुई है। कुछ लोगों का विचार था कि यदि लोगों को जिम्मेदारी सौंप दी गयी तो शायद वे उसे ढो नहीं सकेंगे। लेकिन लोगों को मौका देने के बाद ही उन्हें जिम्मेदारी वहन करने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है। यह आवश्यक हो गया है कि एक साहस भरा कदम उठाया जाये जिससे ज्यादा से ज्यादा जिम्मेदारी लोगों को सौंपी जा सके। लोगों को केवल राय नहीं लेनी है बल्कि उन्हें कारगर ताकत भी सौंपनी है।

भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री और जन-जन की नेता श्रीमती इन्दिरा गांधी ने 1984 में कहा था " गांव के लोग पंचायतों का निर्माण करते हैं और उनका नियंत्रण भी उन्हीं के हाथों में होना चाहिए। मुझे पंचायती राज व्यवस्था से काफी उम्मीदें हैं। काफी कुछ आपके काम पर निर्भर करता है। मुझे आशा है कि आप लोग वर्तमान चुनौतियों का सहर्ष सामना करेंगे।"

स्वंतत्रता के बाद के गत 40 वर्षों में पंचायतों को सुदृढ़ बनाने, उन्हें शक्तियां सौंपने के लिए कई समितियां बनाई गयीं, कई मंचों पर चर्चा की गयी, कई सिफारिशों पर विचार किया गया लेकिन अगर किसी ने सही मायने में बुनियादी कदम उठाया तो वह थे भारत के युवा प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी। श्री राजीव गांधी जब भारत के प्रधानमंत्री बने और उन्होंने 1985 में जब भारत के गांवों का दौरा किया तो यह पाया कि सरकार द्वारा जो कार्यक्रम गांवों के लोगों की उन्नति, उनके विकास के लिए बनाये गये थे, जो पैसा केन्द्र से उन क्रार्यक्रमों पर अमल करने के लिए भेजा जाता है, उसका पूरा लाभ उन तक नहीं पहुंच रहा है। तब उन्होंने प्रण किया था कि इस पूरे ढांचे का पुनर्गठन करके लोगों को शक्तियां सौंप कर ही दम लूंगा। उसी समय से ही उन्होंने इस विषय पर काम करना शुरू कर दिया। वे सारे देश की पंचायतों को नया जीवन देने की राह पर अग्रसर हो गये। इस काम में उन्हें लगभग ढाई वर्ष का समय लगा। उसके पश्चात् उन्होंने देश को तीन विभागों में बांटकर पंचायती राज के बारे में तीन सम्मेलन करने का निर्णय लिया जिनमें पूरे देश के पंचायत प्रतिनिधियों से सीधी बात की जा सके। पहला सम्मेलन नई दिल्ली में, दूसरा कलकत्ता में और तीसरा बंगलौर में आयोजित किया गया। इन तीन सम्मेलनों के आयोजन में लगभग 6 महीने का समय लगा और देश के हर कोने के विचार उनके सामने आ गए।

श्री राजीव गांधी ने 27 जनवरी, 1989 को पहले सम्मेलन में बोलते हुए कहा था कि "हमने आजादी की लड़ाई में और आजादी के बाद संविधान में वादा किया था कि हमारे लोकतंत्र की जो तीसरी कतार है, हम उसे मजबूत करेंगे। पहली और दूसरी कतारें जो दिल्ली में और राज्यों की राजधानियों में है, वे बहुत मजबूत हो गयी हैं। उनके बहुत से चुनाव हो चुके हैं। उनकी जड़ इतनी मजबूत हो गयी है कि उन्हें कोई हिला नहीं सकता। लेकिन तीसरी कतार में कमजोरी रह गयी है और इसका असर पहली और दूसरी कतार पर भी होता है।

"हमारे लोकतंत्र को मजबूत करने के लिए दिल्ली में ही नहीं राज्यों की राजधानियों में ही नहीं, बल्कि पंचायत स्तर पर भी लोकतंत्र को मजबूत करें। हमने इसके लिए पिछले एक डेढ़ साल में अनेक स्तरों पर बहुत कोशिश की है। शुरुआत में मैंने डी.एम. और कलेक्टरों के साथ बातचीत की। फिर हमारी पार्टी में बातचीत हुई। सचिवों और मुख्य सचिवों से बात हुई। मंत्रालयों में भी बहुत बहस हुई। अब हम आपके सामने आये हैं।

"आजादी के आन्दोलन में भी वायदे किए गए थे और संविधान में भी समय समय पर वायदे होते रहे। लेकिन उन वायदों को पूरा करने में किसी ने भी तेजी नहीं दिखाई बल्कि ऊपर के लोग राजनीति और प्रशासन दोनों में अपनी ताकत बनाने में लगे रहे और नीचे की संघीय संस्थाओं को उन्होंने बिल्कुल नजरंदाज कर दिया। चुनाव या तो नाममात्र के हुए या स्थगित होते रहे। ज्यादातर नोमिनेशन द्वारा काम चलता रहता। इससे ताकत कभी नहीं बन सकी। शक्तियों की जो सुपुर्दगी होनी थी वह ठीक तरह

से नहीं हुई, ज्यादातर नाममात्र की हुई। जहां सुपुर्दगी हो भी गयी वह मनमाने तरीके से हटा भी दी गयी या किसी मंत्री को नोमिनेट करके ऊपर बिठा दिया गया। तो असलियत क्या थी? निर्णय लेने की ताकत या तो प्रशासन के हाथ में रही या राज्य सरकारों के हाथ में, नीचे किसी के हाथ में नहीं पहुंची। इसके अलावा काफी साधन भी नहीं दिये गये और जो साधन दिये भी गए वे इस तरह से बंधे रह गये कि उन्हें कोई भी अपनी जरूरत के मुताबिक इस्तेमाल नहीं कर पाया। योजना बनाने में, कार्यक्रम बनाने में और उनके कार्यान्वयन में पंचायती राज संस्थाओं को बहुत कम शामिल किया गया। इस सब बातों का नतीजा यह हुआ कि जो शक्ति गांधी जी, पंडित जी और संविधान जनता के हाथ में देना चाहते थे, वह शक्ति जनता के हाथ में नहीं पहुंची। योजनाएँ और कार्यक्रम ऐसे बने जो ग्रामीण लोगों की जरूरतों को ठीक तरह से पूरा नहीं कर सके।

''ये कार्यक्रम केन्द्र स्तर या राज्यों के स्तर पर बनाए गए और जो गांवों की तकलीफें थी, उनके साथ कार्यक्रमों का ठीक तालमेल नहीं बन सका। इसका नतीजा यह हुआ कि जब ये कार्यक्रम पूरे कर लिये गए तो उनका फायदा पूरी तरह से गांव के लोगों तक नहीं पहुंचा। जो आर्थिक विकास हुआ उसकी जड़ ठीक तरह से जम नहीं सकी क्योंकि योजना बनाने और उसके कार्यान्वयन में फासला ज्यादा हो गया।

''साधारण काम जो गांव के स्तर पर ही हो जाने चाहिए, वे सरकार को करने पड़ते हैं और सरकार ऐसे छोटे-मोटे साधारण काम करती है तो काम नहीं होता। आप जानते ही हैं कि जितने ज्यादा लोग किसी काम में हाथ लगाते हैं, उतनी ही बीच में गड़बड़ हो जाती है। इसलिए हमें देखना है कि हमारी जनता में ऐसी भावना पैदा हो कि वे सब कुछ केन्द्र सरकार या राज्य सरकार पर न छोड़ें बल्कि खुद में परिवर्तन लाने का काम शुरू करें। ऐसा करने के लिए हमें कई काम करने होंगे पहले हमें यह देखना है कि उसे किस तरह से खत्म किया जाये। हर एक को, चाहे वह राजनीति में हो या प्रशासन में, अपने कामों के लिए दौड़कर प्रदेशों की राजधानियों में या दिल्ली में न आना पड़े। जो काम जिलों में हो सकता है, वह जिलों में ही हो जाना चाहिए। जो काम ब्लाक में हो सकता है, वह ब्लाक में ही हो जाना चाहिए और जो काम ग्राम स्तर पर हो सकता है, वह उसे गांव के स्तर पर ही किया जाना चाहिए। हम चाहते थे कि बेइंसाफी दूर हो और सामाजिक न्याय मिले। लेकिन यह ठीक तरह से नहीं हो पाया है। हम चाहते थे कि अत्याचार खत्म हो। आज भी जगह जगह पर अत्याचार होते हैं कमजोर तबकों पर, हरिजनों पर, आदिवासियों पर, महिलाओं पर। हम चाहते थे कि भारत के लोग देश के निर्माण के काम में शामिल हों। इसके लिए बहुत जरूरी है कि हम ज्यादा शक्तियां पंचायती राज संस्थाओं को सुपुर्द करें। यही गांधी जी चाहते थे और पंडित जी भी यही चाहते थे। अब हमारी कोशिश है कि हम गांधी जी और पंडित जी की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए आपकी ताकत बढ़ायें। बहुत से काम करने की जरूरत है। जरूरी है कि हम शक्ति जनता के हाथों में दें, आम लोगों के हाथों में दें, इसमें हमें खास ध्यान देना होगा, कमजोर तबकों पर, हरिजनों पर, आदिवासियों पर और महिलाओं पर। हमें खास ध्यान देना होगा हमारे भाषाई अल्पसंख्यकों की तरफ और दूसरे अल्पसंख्यकों की तरफ।

हमें उम्मीद है कि जो नया सिस्टम बनेगा वह जनता की असली मांगों के अनुरूप काम कर पायेगा। वह सिस्टम आज की असलियत को ध्यान में रखते हुए बनेगा और उसमें पिछली गलतियां दुबारा नहीं की जायेंगी। हमें उम्मीद है कि लोकतंत्र पूरी बुनियाद तक जायेगा और इससे विकास भी वहीं तक पहुंचेगा। सबसे जरूरी बात यह है कि जो सरमायेदार शक्तियां हमारे समाज को जकड़े हुए हैं और सत्ता की दलाल बन गयी हैं, उन्हें हम इससे तोड़ पायेंगे। हमें उम्मीद है कि हम असली शक्ति जनता के हाथ में दे पायेंगे। जिला ब्लाक और गांव में दे पायेंगे जहां हमारी आम जनता रहती है।

'लोगों को अधिकार' दिलाने के आशय से स्वर्गीय श्री राजीव गांधी द्वारा पेश किया गया संविधान (64 वां) संशोधन विधेयक लोक सभा द्वारा 10 अगस्त, 1989 को पारित किया गया था। तथापि इस विधेयक को कानून का दर्जा नहीं दिया जा सका क्योंकि इसे राज्य सभा ने अनुमोदित नहीं किया था। इसी बीच दिसम्बर, 1989 में आम चुनाव हुए और आम चुनावों के बाद लोकसभा में 7 सितम्बर, 1990 को एक संशोधित संविधान (72वां) संशोधन विधेयक पेश किया गया था। लेकिन इस विधेयक को भी विचारार्थ स्वीकार नहीं किया गया। लोकसभा के भंग हो जाने के फलस्वरूप यह विधेयक भी रद्द हो गया था।

1989 में आम चुनावों के पूर्व ही यह कहा गया था कि पंचायती राज विधेयक को तेजी से लागू किया जाएगा। वर्तमान सरकार द्वारा कार्यभार संभालते ही माननीय प्रधानंत्री श्री पी.वी. नरसिंह राव ने पंचायती राज संस्थाओं के लिए एक नया संविधान संशोधन विधेयक तैयार करने का निर्णय लिया।

इस संविधान संशोधन विधेयक को कुछेक मुख्य मदों तक सीमित रखा गया है जिनमें निम्नलिखित पहलुओं को शामिल किया गया :-

प्रत्येक गांव में एक ग्राम सभा होगी जो कि राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाए गए कानून के अनुसार ग्राम स्तर पर अपनी शक्तियों का इस्तेमाल करेगी और इसे सौंपे गए कार्य करेगी।

प्रत्येक राज्य गांव, खंड और जिला स्तरों पर पंचायतों का गठन किया जाएगा, इस प्रकार पंचायती राज ढांचे में एकरूपता आ जाएगी। तथापि ऐसे राज्यों, जिनको जनसंख्या 20 लाख से अधिक नहीं है, को मध्य स्तर पर कोई पंचायत न रखने की छूट दी गई है।

जबकि सभी स्तरों की पंचायतों के सभी सदस्यों के संबंध में सीधे चुनाव होंगे, खंड और जिला स्तर पर अध्यक्षों के पदों के संबंध में अप्रत्यक्ष चुनाव होंगे। ग्राम स्तर पर अध्यक्ष के चुनावों के तरीके के बारे में निर्णय राज्य सरकारों पर छोड़ दिया गया है।

प्रत्येक स्तर पर अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में सीटें आरक्षित करने का प्रावधान किया गया है। कुल सदस्यों में कम से कम एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की गई हैं तथा इन सीटों को पंचायत के विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में बारी-बारी से आंबटित किया जा सकता है। इसी प्रकार का आरक्षण अध्यक्ष पदों के लिए भी किया गया है।

प्रत्येक पंचायत के लिए 5 वर्षों का स्पष्ट कार्यकाल निर्धारित किया गया है बशर्ते कि इन्हे विशिष्ट कारणों तथा कानूनों के अनुसार पहले भंग नहीं कर दिया गया है। तथापि, पंचायत के चुनाव का कार्य उनके भंग होने के 6 माह के भीतर और इनके सामान्य कार्यकाल समाप्त होने से पहले पूरा किया जायेगा।

राज्य विधान मंडलों को यह शक्तियां दी गई हैं कि वे पंचायतों को स्थानीय तौर पर उपयुक्त कर लगाने और उन्हें एकत्र करने का अधिकार दें तथा राज्यकोष से पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा करने तथा राज्य और स्थानीय निकायों के बीच निधियों के वितरण के बारे में उपयुक्त सिफारिशें देने के लिए प्रत्येक पांच वर्ष में एक बार एक वित्त आयोग का गठन भी किया जाना है। केन्द्रीय वित्त आयोग भी राज्य में पंचायतों के संसाधनों में मदद करने के लिए राज्य के राजकोष में वृद्धि करने के लिए आवश्यक उपायों के बारे में सुझाव देगा। इस प्रकार से पंचायती राज निकायों को अधिक धन मिल सकेगा जिससे आयोजना प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी सुदृढ़ बन सकेगी।

धन मुहैया कराने के अलावा, विधेयक में राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों को सौंपी गई आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की अन्य योजनाओं के अतिरिक्त संविधान की 11 वीं सूची में दी गई कई मदों का उल्लेख किया है जिन्हें पंचायतों को सौंपा जा सकता है।

यह बात सुनिश्चित करने के लिए कि पंचायतें सुचारु रूप से काम करती रहें, विधेयक में इस बात की व्यवस्था की गई है कि इस संशोधन अधिनियम के लागू होने से पहले तक जो पंचायतें मौजूद हैं वे अपना कार्यकाल पूरा होने तक चलती रहेंगी बशर्ते कि उन्हें उस राज्य की विधान सभा द्वारा पारित किए गए प्रस्ताव द्वारा भंग न कर दिया जाए। राज्य विधान मंडलों को भी इस संशोधन विधेयक के लागू होने से लेकर अधिकतम एक वर्ष का समय दिया गया है कि वे अपने पंचायत अधिनियमों में आवश्यक संशोधन करें ताकि ये अधिनियम संविधान के प्रावधानों के अनुरूप हो सकें।

इस विधेयक के परिणामस्वरूप सामान्यत: ग्रामीण विकास कार्यक्रमों और विशेष रूप से जवाहर रोजगार योजना को बल मिलेगा। जवाहर रोजगार योजना का मूल सिद्धांत यह है कि ग्राम पंचायतें, जिन्हें कार्यक्रम के अंतर्गत निर्माण कार्य चलाने में प्रमुख भूमिका निभानी है, अपने गांव में चलाये जाने वाली योजनाओं के बारे में निर्णय ले सकेंगी। पंचायत स्तर पर मतदाताओं के प्रति जिम्मेदार चुने हुए निकाय होने की वजह से जवाहर रोजगार योजना कार्यक्रम के कार्यान्वियन में लोगों की प्रत्यक्ष भागीदारी दृष्टिगोचर होगी। इस तरह से एक प्रक्रिया जो स्वर्गीय राजीव गांधी जिन्होंने जवाहर रोजगार योजना और पंचायत राज विधेयक दोनों शुरू किए थे, से शुरू हुई थी अब सही गंतव्य पर पहुंच गई है। इस विधेयक के पारित हो जाने से अब ग्रामीण विकास की ओर अधिक योजनाएं शुरू कर पाना संभव हो सकेगा जिन्हें तैयार करने और कार्यान्वित करने में लोगों की व्यापक भागीदारी होगी। आठवीं योजना में ग्रामीण विकास के लिए परिव्यय को बढ़ाकर 30,000 करोड़ रुपये करना इस विधेयक के संदर्भ में व्यापक महत्व रखता है।

इस प्रकार अब अपनाए गए विधेयक से स्वर्गीय श्री राजीव गांधी का 'लोगों को सत्ता' देनेका स्वप्न अब साकार हो गया है। अब पंचायतें भी अन्य लोकतांत्रिक संस्थाओं की तरह बनी रहेगी, उनके पास शक्तियां और साधन होंगे, वे लोगों की भावनाओं को प्रकट करेंगी और प्रभावशाली तीसरा दर्जा साबित होगी जिसे हम सम्मान से लोकतन्त्र का पहला दर्जा कह सकेंगे।

53, नीमड़ी कालोनी,

दिल्ली-110052

पंचायतों के माध्यम से ग्रामीण विकास

✍ देवेन्द्र उपाध्याय

संसद ने अपने शीतकालीन सत्र में पंचायती राज संविधान संशोधन विधेयक पारित करके देश की ग्राम पंचायतों को गांवों की विकास योजनाएं बनाने और उनको कार्यान्वित करने का अधिकार प्रदान कर दिया है। इससे देश के निचले स्तर के लोगों को भी लोकतंत्र में भागीदारी का अधिकार मिल गया है।

पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता मिलने की दिशा में यह एक सार्थक प्रयास है। संसद और राज्यों की विधान सभाओं की ही तरह ग्राम पंचायतों को भी संवैधानिक मान्यता मिल गयी है। विधेयक में पंचायतों के चुनाव निश्चित समय पर कराने, उनमें महिलाओं, पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों को आरक्षण देने की व्यवस्था की गयी है। स्थानीय स्तर पर पंचायतों को संसाधन जुटाने और नियोजन अधिकार भी प्रदान किये गये हैं।

तत्कालीन ग्रामीण विकास राज्य मंत्री श्री जी. वेंकटस्वामी ने स्पष्ट किया कि विधेयक के माध्यम से संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची को भी जोड़ा गया है। इससे ग्राम पंचायतों को सही अर्थों में कृषि, भूमि सुधार, लघु सिंचाई, ग्रामीण आवास, ग्रामीण सड़कों, बिजली और पेयजल जैसे विकास कार्यक्रमों को अपनी आवश्यकतानुसार क्रियान्वित करने के अवसर प्राप्त हो सकेंगे। इसका सीधा सा अर्थ है कि गांवों का विकास अब ग्राम पंचायत स्तर पर बनायी गयी योजनाओं से हो सकेगा और ऊपर से थोपी गयी असमान योजनाओं के कारण पैदा होने वाली विषमताएं एवं जटिलताएं भी समाप्त होंगी।

पंचायतों को संवैधानिक मान्यता मिलने से अब गांव, विकास खंड और जिला स्तर पर पांच वर्ष में पंचायतों के चुनाव कराया जाना अनिवार्य हो गया है। अगर कोई पंचायत भंग या निलंबित की जाती है तो उसके नये चुनाव 6 माह में कराये जाने आवश्यक कर दिये गये हैं। हर पंचायत में अब एक तिहाई महिला सदस्य अनिवार्य रूप से होंगी। गांव की आबादी के हिसाब से उस गांव में रहने वाले अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों के लोगों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलेगा। विधेयक में जोड़ी गयी ग्यारहवीं अनुसूची में 29 कार्यक्रम शामिल हैं जिनका क्रियान्वयन करने के लिए अब स्थानीय कार्यान्वयन संभव हो गया है।

तत्कालीन ग्रामीण विकास राज्यमंत्री श्री जी. वेंकटस्वामी ने कहा कि आठवीं योजना में ग्रामीण विकास के लिए 30 हजार करोड़ रुपये की राशि का प्रावधान किया गया है। पंचायतों को संवैधानिक मान्यता मिलने से अब इस राशि का उपयोग देश के सबसे निचले स्तर के व्यक्ति के कल्याण के लिए होगा। इससे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों और विशेष रूप से जवाहर रोजगार योजना को बल मिलेगा। जवाहर रोजगार योजना का मूल सिद्धान्त यह है कि ग्राम पंचायतें, जिन्हें कार्यक्रम के अंतर्गत निर्माण कार्य चलाने में प्रमुख भूमिका निभानी है, अपने गांव में चलायी जाने वाली योजनाओं के बारे में निर्णय ले सकेंगी। पंचायत स्तर पर मतदाताओं के प्रति जिम्मेदार चुने हुए निकाय होने की वजह से जवाहर रोजगार योजना कार्यक्रम के कार्यान्वयन में लोगों की भागीदारी प्रत्यक्ष रूप में संभव हो जायेगी।

पंचायतें सुचारु रूप से कार्य करती रहें इसे सुनिश्चित करने के लिए विधेयक में इस बात की व्यवस्था की गयी है कि इस संविधान संशोधन के लागू होने से पहले तक जो पंचायतें मौजूद हैं वे अपना कार्यकाल पूरा होने तक चलती रहेंगी, बशर्ते कि उन्हें उस राज्य की विधानसभा भंग न कर दे। संशोधन विधेयक लागू होने से लेकर अधिकतम एक वर्ष के भीतर अपने-अपने पंचायत अधिनियमों में संशोधन करने का राज्य के विधानमडंलों को समय दिया गया है जिससे उनके अधिनियम संविधान के प्रावधानों के अनुरूप हो सकें।

पंचायतों के चुनाव पूरी तरह राज्य निर्वाचन आयोग के नियंत्रण में कराये जाने की व्यवस्था इस विधेयक में की गयी है। इससे साफ है कि गांवों के समग्र विकास की दिशा में सही पहल की जा रही है। पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने और उन्हें शक्ति प्रदान करने की दिशा में यह विधेयक महत्वपूर्ण साधन बन गया है। अब पंचायत समिति के सदस्यों की आयु 21 वर्ष हो जाने से युवकों को अधिकाधिक भागीदारी के अवसर मिलेंगे।

भारत में पंचायती राज व्यवस्था की शुरूआत सन् 1952

में सामुदायिक विकास कार्यक्रम बनाने के साथ ही हो गयी थी। स्वतंत्रता के बाद ग्रामीण पुनर्निमाण में जनता की भागीदारी की यह शुरुआत थी। उसके बाद इस संबंध में अनेक कदम उठाए गए। राजस्थान के नागौर में 2 अक्टूबर 1959 को तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने एक रैली में पंचायती-राज व्यवस्था का उद्‌घाटन किया।

पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत करने के लिए इसके बाद अनेक कार्यक्रम बने और कई समितियां गठित की गयीं। अशोक मेहता समिति और डा. जी.वी. के. राव समिति ने अनेक सिफारिशें कीं। पंचायती राज संस्थाओं की व्यापक समीक्षा के लिए एक राष्ट्रीय कार्यशाला भी आयोजित की गयी। डा. लक्ष्मीमल सिंघवी की अध्यक्षता में जून 1986 में एक आठ सदस्यीय समिति गठित हुई। इस समिति ने गांवों के पुनर्गठन का सुझाव दिया। इसके बाद केन्द्र राज्य संबंधों पर सरकारिया आयोग का गठन किया गया। कार्मिक जनशिकायत एवं पेंशन मंत्रालय की संसदीय सलाहाकार समिति ने श्री पी.के. थुंगन की अध्यक्षता में 1988 में एक उप समिति गठित की। इस उप समिति ने जिला नियोजन हेतु जिलों में राजनीतिक और प्रशासनिक ढांचे की किस्म पर विचार किया। समिति ने पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव 5 वर्ष में कराने का संवैधानिक प्रावधान करने और उन्हें संवैधानिक मान्यता देने का सुझाव दिया।

प्रधानमंत्री स्व. राजीव गांधी ने लोकसभा में 64वां संविधान संशोधन विधेयक पेश किया जिसे लोकसभा ने 10 अगस्त 1989 को पारित कर दिया। राज्य सभा में पारित न होने के कारण यह कानून नहीं बन सका। नवीन लोकसभा का गठन होने के बाद श्री वी.पी. सिंह ने लोकसभा में 7 सितम्बर 1990 को एक संशोधित संविधान संशोधन विधेयक पेश किया। इस विधेयक को विचारार्थ स्वीकार नहीं किया गया और लोकसभा भंग होने के बाद यह विधेयक रद्द हो गया।

10वीं लोकसभा के गठन के बाद प्रधानमंत्री श्री पी.वी. नरसिंह राव ने जो ग्रामीण विकास मंत्री भी हैं पंचायती राज संस्थाओं के लिए एक नया संविधान संशोधन विधेयक तैयार करनेका निर्णय लिया। 16 सितम्बर, 1991 को संविधान 72वा संशोधन विधेयक लोकसभा में पेश किया जिसे दिसम्बर 1991 में संसद की संयुक्त समिति को सौंपा गया जिसमें लोकसभा के 20 और राज्यसभा के 10 सदस्य शामिल थे। संयुक्त संसदीय समिति में हुई आम राय पर विचार करने और दिसम्बर 1992 में हुई चर्चा के दौरान विभिन्न राजनितिक पार्टियों के नेताओं द्वारा उठाये मुद्दों को ध्यान में रखते हुए सरकार ने विधेयक में आवश्यक संशोधन पेश किए। लोकसभा ने 22 दिसम्बर 1992 को आम सहमति से विधेयक को पारित कर दिया। राज्य सभा में यह विधेयक 23 दिसम्बर 1992 को पारित किया गया।

इस विधेयक के पारित होने से निचले स्तर के लोगों को सत्ता में भागीदारी देने का एक सार्थक कदम सामने आया है। पंचायतें अब संविधान में प्रतिष्ठापित अन्य लोकतांत्रिक संस्थाओं की तरह नियंत्रित रूप से बनी रहेंगी। पंचायतों के पास अब लोगों के आर्थिक विकास के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए पर्याप्त शक्तियां और वित्तीय साधन उपलब्ध होंगे। लोगों की भावनाओं को प्रदर्शित करने में पंचायतें अब कारगर कदम उठाने में सक्षम हो सकेंगी।

साभार पत्र सूचना कार्यालय

लेखकों के लिए

रचना और अन्य प्रकाशनार्थ सामग्री भेजने वालों से अनुरोध है कि रचना भेजते समय वे कृपया इन बातों का ध्यान रखें:-

रचना संक्षिप्त एवं रोचक होनी चाहिए। इसमें उपलब्ध करायी गयी जानकारी अप्रकाशित और प्रमाणित होनी चाहिए।

रचना दो प्रतियों में डबल स्पेस में टाइप की हुई हो जो सात-आठ पृष्ठों से अधिक की नहीं होनी चाहिए। विषय प्रतिपादन में उपशीर्षकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

रचना के साथ ब्लैक एंड व्हाइट फोटो भी आमंत्रित हैं।

कहानी

उजाला

✍ दुर्गेश

रामधन इस बार पूरे तीन वर्ष पश्चात गांव आया था। मन में मित्र साथियों से मिलने का बहुत ही उत्साह था। बस से उतरकर सर्वप्रथम वह गांव के चौक की ओर चल पड़ा। वहीं रेत के टीलों के बीच से जाता, जाना-पहचाना रास्ता था। भैरूंजी वाला जांट वैसे ही स्थिर खड़ा था। रास्ते में छकड़ों की लीक मंडी हुई थी। दोनों ओर कहीं-कहीं कंकेड़े और आक खड़े थे। खीपों की टापी में बनाई गई प्याऊ में इस समय कोई नहीं था।

वहअपने विचारों में मग्न तेजी से चल रहा था इस समय बालपन का एक-एक दृश्य उसकी आंखों के आगे प्रगट हो रहा था। रामधन इसी गांव में जन्मा और पास के शहर में पढ़ा। जब शिक्षित हुआ तो अपने गांव को विकास की दौड़ में अत्यधिक पीछे पाया। शहर की तुलना में गांव में उसका मन नहीं लगा और एक दिन वह उसी नगर में आ गया जिस में रहकर उसने अपनी पढ़ाई पूरी की थी, हां बीच-बीच में वह गांव आता -जाता अवश्य था।

जब भी रामधन गांव आता वह सोचता 'इस गांव का सुधार कैसे हो सकता है? आज चारों ओर कुछ न कुछ प्रगति हो रही है। हरजगह विकास का प्रकाश पहुंच चुका है। शहर और गांवों का अन्तर कम होता जा रहा है। जगह जगह वर्तमान युग की बातें हो रही हैं। लेकिन सुराजपुर आज भी वहीं का वहीं है। कहीं कोई प्रगति नहीं, परिवर्तन नहीं। गांव की यथास्थिति की बातें सोचता-सोचता वह चौक में पहुंच गया।'

पर यह क्या? आज तो उसे सब कुछ अनूठा ही दिखाई दे रहा था। इस समय तो यहां सांगोपांग मंडलियां जमा करती थीं। लेकिन आज यहां न तो चबूतरे पर चौपड़ बिछी थी और न गट्टे पर चरमर की मंडी हुई थी। एक ओर 'पाल' पर काला बोर्ड टंगा हुआ था। पास ही परींडे की पट्टी पर एक गैस लालटेन पड़ी थी। परींडे के आले में चौपड़ के टूटे हुए पासे बिखरे पड़े थे। पहले जैसे चहल-पहल तो आज तो उसे चौक में कोई दिखाई ही नहीं दे रहा था। उसकी समझ में कुछ भी नही आया। वह वहीं गट्टे पर बैठकर इस अप्रत्याशित परिवर्तन के संबंध में तरह तरह की अटकलें लगाने लगा। कुछ समय बाद उसे सामने से पूराराम आता दिखाई दिया। रामधन को देखते ही वह बोला ''आओ रामधन! इस बार तो बहुत समय बाद आये हो। यह क्या बात हुई? गांव को तो एकदम ही भूल गये।''पूराराम के पास कुर्सी बनाने का सामान था।

रामधन ने कहा 'नहीं... नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। लेकिन तुम एक बात तो बताओ, इस बार सब कुछ बदला बदला कैसे दिखाई दे रहा है? आज यहां हरि, बजरंग और रामानन्द में से तो कोई भी दिखाई नहीं दे रहा है। क्या वे सब लोग कहीं बाहर चले गये हैं?'

पूराराम ने कहा - 'सब लोग गांव में ही हैं चाहो तो इसी समय उनसे मिलना हो सकता है।'

'लेकिन यह समय तो ताश-चौपड़ और चिलम-पान का है। आज न तो कहीं चौपड़ बिछी है और न कहीं चरमर की चाल चल रही है। क्या कहीं दूसरी जगह बैठक जमने लगी है?' रामधन ने आश्चर्य से पूछा।

'नहीं... नहीं, दूसरे स्थान पर क्यों? अब भी गांव के सभी लोग नियम से इसी चौक में एकत्र होते हैं। लेकिन अब यहां बैठने का समय रात्रि आठ बजे होगा। वह सामने देखो।' कहकर पूराराम ने सामने टंगे बोर्ड की ओर संकेत किया।

रामधन ने बोर्ड की ओर देखकर कहा - 'अच्छा... अच्छा आजकल ताश, चौपड़ रात के समय ही खेलते हो? और यह बोर्ड?'

'नहीं, यह बात नहीं है। अब गांव में कोई भी ताश, चौपड़ और चरमर नहीं खेलता है। गांव वाले आजकल दिन में तो कोई न कोई काम करते है और रात्रि को यहां आकर पढ़ाई करते हैं। आजकल यहां रात्रि को प्रौढ़ पाठशाला लगती है। पढ़ाई के साथ-साथ ही इस पाठशाला में तरह तरह की कला, स्वास्थ्य और समाज-सुधार की बातें भी बताई जाती हैं। इस केन्द्र के कारण थोड़े से समय में गांव ने पर्याप्त प्रगति की है। अब तो यहां पुस्तकालय और वचनालय भी चलने लगा है। पहले जो लोग

रात-रात तक ताश पीटते रहते थे वे अब पुस्तकों के पन्ने पलटने लगे हैं' कहकर पूराराम ने रामधन की ओर देखा। रामधन लगातार सामने टंगे बोर्ड की ओर देख रहा था। पूराराम की बातें सुनकर उसे अपार हर्ष हुआ। उसने सोचा, वह तो आज तक केवल गांव-सुधार की बातें ही सोचता रहा। पर अब तो उसका स्वप्न सच हो गया है। सारी बातें सुनकर उसे विश्वास हो गया कि सुराजपुर भी एक दिन नवयुग में पहुंच सकता है। फिर उसने अचानक ही पूछा 'लेकिन गांव में यह परिवर्तन आया कैसे? क्या यह प्रौढ़ पाठशाला सरकार की ओर से चलती है?'

पूराराम बताने लगा - 'यह प्रौढ़ शिक्षण केन्द्र सरकार नहीं चला रही है। इस प्रौढ़ पाठशाला को तो गांव के पढ़ने वाले छात्र ही चला रहे हैं। ये विद्यार्थी दिन में शहर में जाकर स्वयं पढ़ते हैं और रात्रि को यहां गांव वालों को पढ़ाते हैं। इस रात्रि पाठशाला का समस्त कार्य छात्रों ने ही संभाल रखा है। विद्यार्थियों की लग्न देखकर आज गांव के सभी प्रौढ़ लोग यहां पढ़ने आते हैं।

पढ़ाई के साथ-साथ ही गांव वालों को इस केन्द्र पर हाथ की कला के भी कई काम सिखलाये जाते हैं। अब गांव वालों ने ताश-चौपड़ खेलों को छोड़कर पढ़ाई और परिश्रम का संकल्प ले लिया है। अब गांव के सभी लोग किसी न किसी कार्य में लगे हुए हैं। अब आप मेरे साथ चलो। उनका काम देखकर आप समझ जाओगे कि अब इस गांव में कितना बदलाव आ गया है।

रामधन पूराराम के साथ-साथ चलने लगा। पूराराम ने उसे घर-घर जाकर लोगों से मिलवाया और उनका कार्य दिखाया। उसने देखा कि गांव वालों ने अपने-अपने घरों में कोई न कोई कार्य प्रारंभ कर रखा है। कोई शिल्पकला में लगा हुआ था तो कोई कुर्सी बुन रहा था। कहीं रस्सी बनाने का काम हो रहा था तो कहीं दरी बनाई जा रही थी। लोग तरह तरह के खिलौने बना रहे थे तो कई दूसरी कलाओं में लगे हुए थे। पूराराम ने बताया कि इन सब चीजों का शहर में एक केन्द्र भी बना रखा है। गांव में बनी इन चीजों की शहर में बहुत ही मांग है। अब तो पास के गांव वाले भी यहां काम सीखने आने लगे हैं।

पूराराम ने एक-एक कर सारे कार्य दिखाए। अब सब कुछ उसके सामने था। रामधन बोला 'अब तो यह गांव सभी गांवों से आगे रहेगा।'

रात्रि को वह प्रौढ़ पाठशाला में पहुंचा। उसने देखा कि दिन में अपने-अपने काम में लगे हुए सभी लोग पट्टी-पुस्तक लिये पाठशाला में पहुंच रहे हैं। पहले जिस चौक में ताश-चौपड़ की चाल चलती रहती थी उस स्थान पर आज पढ़ाई हो रही है। और व्यर्थ के विवाद के स्थान पर पाठ और पहाड़ों के स्वर गूंज रहे हैं। रामधन ने देखा कि अब सम्पूर्ण गांव में अक्षरों का उजाला छाया हुआ है।

तभी पूराराम ने पूछा - 'अब आप शहर कब जा रहे है?' रामधन बोला 'नहीं अब मैं वापस शहर नहीं जाऊंगा। वास्तव में मुझे प्रगति के लिए बाहर न जाकर उसी समय यह कार्य प्रारंभ करना चाहिए था। पर अब यहां रहकर इसी कार्य में सहयोग करूंगा

महराजा होटल

चूरु (राजस्थान)

पर्यावरण

मन्तोष पोसला

झुलसे-से पेड़-पौधे
हरियाली रहित
शायद रूठ गई है
प्रकृति उनसे
इसलिए
उनके स्थान पर
उगने लगे हैं
प्लास्टिक के पौधे
कैसा समय आ गया है
असली फूलों का स्थान
नकली फूलों ने
पा लिया है।
काश हम असली नकली का
भेद कर पाते
और विश्व को एक नया पर्यावरण दे पाते।

वारन्ट अफसर

1, केन्द्रीय बेस डाक घर, द्वारा 56 ए.पी.ओ.

पंचायती राज के पुनर्गठन में गुजरात का योगदान

✍ डॉ. कमल पुंजाणी

पंचायती राज प्रजातंत्रीय शासन व्यवस्था की एक सुदृढ़ कड़ी है। भारत में वैदिक काल से ही ग्राम सभाओं अर्थात् ग्राम पंचायतों का गठन हो चुका था। अर्थववेद (8/10-12) में कहा गया है:

"सा उदक्रामत् सा समायां न्यक्रामत।

सा उदक्रामत् सा समितौ न्यक्रामत।

सा उदक्रामत् साऽऽमन्त्रणे न्यक्रामत।"

अर्थात् जनशक्ति उत्क्रान्त होकर ग्राम सभा, राष्ट्र-समिति और मंत्रिमंडल में परिणत हुई।

शुक्राचार्य के 'नीतिसार' (2/2-4) तथा 'मनुस्मृति' (7/30-31) में भी लोकतंत्र के अन्तर्गत पंचायती राज की चर्चा हुई है।

प्रसिद्ध पाश्चात्य विचारक जॉर्ज बर्डवुड (George Birdwood) ने अपने 'इण्डस्ट्रियल आर्ट्स ऑफ इण्डिया' (Indurstrial Arts of India) नामक ग्रंथ में प्राचीन भारत में प्रचलित पंचायती राज की पर्याप्त प्रशंसा की है। एक स्थान पर उन्होंने लिखा है:"विश्व के सभी देशों में धार्मिक एवं राजनीतिक परिवर्तन भारत में ही अधिक हुए हैं, तथापि सारे द्वीपकल्प पर ग्राम-पंचायतें अपना नागरी प्रभाव सुरक्षित रख पायी हैं।"

भारत की पंचायती राज प्रणाली पर सर्वाधिक कुठाराघात अंग्रेजों ने किया, फिर भी वे इसे नष्ट नहीं कर पाये। इस संबंध में अंग्रेज गवर्नर सर चार्ल्स मेटकॉफ की निम्नलिखित सम्मति दृष्टव्य है :"ग्राम पंचायतें छोटे प्रजासत्ता राज्य जैसी होती है... जहां कुछ भी स्थिर नहीं रह पाता, वहां ग्राम पंचायतें अपना अस्तित्व आसानी से सुरक्षित रख सकती हैं।"

स्वंतत्रता-प्राप्ति के बाद भारत में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्रों के विकास के लिए ग्रामसमूह पर विशेष ध्यान दिया गया और संविधान की 40वीं धारा में संकलित ग्राम-विकास की योजना को सम्मलित किया गया।

स्वंतत्र भारत में पंचायती राज के पुनर्गठन का सर्वप्रथम प्रयास गुजरात के महान सपूत स्वर्गीय बलवन्तराय मेहता ने किया था। श्री मेहता भारत की प्रथम लोकसभा के सदस्य और भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू के विश्वसनीय साथी थे। उनकी शासकीय सूझ-बूझ से प्रभावित होकर नेहरू जी ने कांग्रेस का महामंत्री पद उन्हें सौपा था और ग्रामोद्धार की योजना को क्रियान्वित करने की प्रेरणा दी थी।

सन् 1957 में श्री मेहता की अध्यक्षता में एक ग्रामोद्धार समिति का गठन हुआ था। इस समिति के सदस्यों के साथ श्री मेहता ने भारत के विभिन्न गांवों का दौरा किया और ग्रामीण कार्यकर्ताओं, किसानों, सरपंचों आदि के साथ व्यापक विचार-विमर्श करके सरकार को त्रिस्तरीय पंचायती राज का सुझाव दिया।

श्री मेहता द्वारा प्रस्तावित पंचायती राज के तीन स्तर इस प्रकार हैं

1. ग्राम अथवा नगर पंचायत
2. तहसील पंचायत और
3. जिला पंचायत।

ये तीनों स्तरों की पंचायतें एक दूसरे की पूरक हैं और देश के विकास में अपना बहुमूल्य सहयोग दे सकती हैं।

जिस समय भारत के विविध राज्यों में पंचायती राज क्रियान्वयन होने लगा था, उस समय तक गुजरात को 'एक स्वतंत्र राज्य' का दर्जा नहीं मिला था। वह महाराष्ट्र में सम्मिलित था। 1 मई, 1960 को गुजरात एक स्वतंत्र राज्य के रूप में घोषित हुआ। तत्कालीन राजस्व मंत्री श्री रसिकलाल पारीख ने लोकल बोर्ड, स्कूल बोर्ड तथा ग्राम पंचायतों का समन्वय करके गुजरात में पंचायती राज का क्रियान्वयन किया।

19 सितम्बर, 1963 को श्री बलवन्तराय मेहता गुजरात के मुख्य मंत्री हुए। उन्होंने पंचायती राज की प्रणाली में पर्याप्त संशोधन किया और संम्पूर्ण गुजरात में त्रिस्तरीय पंचायती राज का प्रसार किया।

भारत में गुजरात ही एक ऐसा राज्य है जिसमें पंचायती राज की प्रणाली सर्वाधिक सफलता प्राप्त कर पायी। गुजरात के पड़ोसी राज्य महाराष्ट्र में भी पंचायती राज का क्रियान्वयन हो चुका है, परन्तु दोनों की कार्य-पद्धति में बड़ा अन्तर है। महाराष्ट्र में ग्राम पंचायतों के सरपंचों का चुनाव सीधा न होकर पंचायत

(शेष पृष्ठ 42 पर)

पंचायती राज : आशाएं और आशंकाएं

✍ बृजेन्द्र राकेश

"देश की आजादी का अर्थ मात्र राजनीतिक आजादी नहीं है। उसका अर्थ शहरी लोगों की आजादी भी नहीं है। वास्तविक आजादी वह होगी जिसमें ग्रामवासियों को अपने भाग्य का, अपने भविष्य के निर्माण का स्वामित्व प्राप्त होगा। यह उनके स्व-शासन के जरिये ही हो सकता है और इसी का अर्थ है पंचायती राज।"

— *महात्मा गांधी*

हमारे देश में पंचायती राज की अवधारणा कोई नई नहीं है। यह बहुत पुरानी है। हर गांव में एक पंचायत होती थी जिसमें गांव के वयोवृद्ध, अनुभवी तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति पंच की हैसियत से शामिल होते थे। जब भी कभी गांव में विवाद या झगड़े उत्पन्न होते थे तो उन्हें हल करने के लिए पंचायत बुलाई जाती थी। इसका प्रधान सरपंच या मुखिया कहलाता था। पंचों को परमेश्वर का रूप माना जाता था और उनका निर्णय सभी के लिए शिरोधार्य होता था।

ग्राम पंचायतें सभी युगों में रही हैं, परन्तु उनकी प्रभावशीलता में समय के साथ-साथ क्षरण होता रहा है। राजकीय न्यायालय व्यवस्था के प्रचलन के साथ ही पंचायतों के न्यायिक रूप का ह्रास होता गया है। धीरे-धीरे ग्रामों की प्रबंध-व्यवस्था भी शहरों में केन्द्रित प्रशासन के पास चली गई। विदेशी शासन काल में यह खास तौर पर हुआ क्योंकि विदेशी शासक ग्रामों की स्वायतत्ता को अपनी अधिकार सत्ता के लिए चुनौती मानते थे।

ग्राम-स्वराज्य का आरंभ

अत: यह स्वाभाविक ही था कि देश के स्वतंत्र होते ही लोगों का ध्यान इस ओर जाता। देश में लोकतंत्र की स्थापना का यह स्वाभाविक तकाजा था कि ग्रामवासियों को भी लोकतंत्र का सुख मिले। नगरों में नगरपालिकाओं का प्रचलन तो पहले ही हो चुका था। अत: स्वतंत्रता मिलने के बाद देश के कर्णधारों ने ग्राम-स्वराज्य की दिशा में चिंतन शुरू कर दिया। इसकी प्रेरणा भी स्वाधीनता-संग्राम के नायक, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने ही दी। उन्होंने अपनी ग्राम स्वराज्य की अवधारणा को अपने पत्र 'हरिजन' में अभिव्यक्ति दी। देश के प्रथम प्रधामंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने उस कार्य को आगे बढ़ाया। उन्हीं के काल में देश में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण कार्यक्रम पचास के दशक में शुरू हुआ। यह कार्यक्रम बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट पर आधारित था। राष्ट्रपिता के जन्मदिन 2 अक्तूबर, 1959 को नेहरू जी ने राजस्थान के नागौर जिले में इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन का उद्घाटन किया।

समितियों की रिपोर्ट

पंचायती राज की अवधारणा को मूर्त रूप देने में अनेक विद्वानों का योगदान रहा है। सबसे पहले अशोक मेहता समिति की रिपोर्ट प्रकाश में आई। रिपोर्ट में सिफारिश के साथ ही साथ एक विधेयक का मसविदा भी दिया गया था। इस रिपोर्ट पर काफी बहस चली जिसने अस्सी के दशक में विशेष जोर पकड़ा।

अशोक मेहता समिति के अलावा कुछ अन्य समितियों ने भी इस क्षेत्र में काम किया। उनमें उल्लेखनीय हैं - जी.वी.के. राव समिति, सिंघवी समिति और थुंगन समिति। सिंघवी समिति ने अपनी रिपोर्ट में अपनी में निम्नलिखित सिफारिशें कीं:

1. ग्रामों को पुनर्गठित किया ताकि टिकाऊ एवं प्रभावशाली ग्राम पंचायतों का निर्माण किया जा सके।

2. पंचायतों को स्वशासन के रूप में देखा जाए जिसके तहत विकास कार्यों में गांव के लोगों की सीधी भागीदारी सुनिश्चित हो।

3. संविधान में एक नया अध्याय जोड़कर स्थानीय स्वशासन (पंचायती राज) को संवैधानिक मान्यता तथा संरक्षण प्रदान किया जाए।

4. पंचायती राज-न्यायिक अधिकरण स्थापित किए जाएं जो संस्थाओं व सदस्यों के चुनाव, निलम्बन, विघटन आदि से संबंधी विषयों पर फैसले करने के अधिकारी हों।

5. पंचायती संस्थाओं को पर्याप्त संसाधन सुलभ कराने के लिए उपयुक्त उपाय खोजे जाएं।

संविधानिक मान्यता

यहां यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि हमारे संविधान में द्वितलीय स्वशासन की ही व्यवस्था है। केन्द्र और राज्य, शासन के दो तल है। उसमें शासन के तीसरे तल के रूप में पंचायती

राज अथवा ग्राम-राज्य का प्रावधान नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 40 (निर्देशक सिद्धांतों) में अवश्य उसे स्थान प्राप्त है। इसलिए पंचायती राज के लिए संविधानिक मान्यता की आवश्यकता महसूस की गई है।

गत 1959 से लेकर आज तक कई राज्यों में पंचायत संस्थाएं बनीं, लेकिन वे ढंग से काम नहीं कर पाईं। कई राज्यों में तो कई दशकों से पंचायती चुनाव नही हुए हैं। उत्तर प्रदेश में ही पिछले 25 वर्षों से पंचायतों के चुनाव नहीं हुए हैं। कर्नाटक और पश्चिम बंगाल ही दो ऐसे राज्य हैं जहां पंचायती संस्थाओं को आदर्श माना जा सकता है।

राजीव गांधी की पहल

अस्सी के दशक में पंचायती राज की दुर्दशा की ओर सरकार का ध्यान गया और उसे पुनर्जीवन देने की आवश्यकता महसूस की गई। सन् 1984 में चुनावों के बाद दूर-दूर तक देश के दौरे करने के बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी स्वयं इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि आर्थिक विकास कार्यक्रमों की सफलता जनता की भागीदारी के बगैर सम्भव नहीं है और जनता की पूरी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए पंचायती राज बहुत जरूरी है। जब तक ग्रामवासी विकास-कार्यों में सीधे शरीक नहीं होंगे, तब तक निर्धनता उन्मूलन असम्भव है क्योंकि निर्धनों की सबसे अधिक संख्या ग्रामों में है। बिचौलियों और नौकरशाहों के वर्चस्व के कारण ग्रामों में विकास के लिए खर्च की जा रही राशि का मात्र 15 से 20 प्रतिशत अंश ही निचले स्तरों तक पहुंच पाता है। इसलिए उन्होंने यह नारा दिया - ''जन की सत्ता सौपें जन को'' इसी आधार पर उन्होंने पंचायती राज को पुर्नजीवित करने के लिए एक विधेयक तैयार कराके संसद में पेश किया। इस विधेयक में पंचायती राज को राज्य सरकारों के चंगुल से मुक्त करने की व्यवस्था थी। चूंकि देश के कई राज्यों में उस समय गैर-कांग्रेसी सरकारें चल रही थीं, इसलिए गैर-कांग्रेसी दलों ने इस विधेयक का विरोध किया। उन्होंने इसे गैर-कांग्रेसी राज्यों में समानान्तर कांग्रेसी सरकारों की स्थापना की साजिश करार दिया। फलत: विधेयक लोकसभा में तो पारित हो गया पर राज्य सभा में, जहां गैर-कांग्रेसी बहुमत था, गिर गया। इस बीच संसद भंग हो गई और नए चुनाव हुए। विधेयक निरस्त हो गया।

सन् 1989 के अंत में राष्ट्रीय मोर्चा सरकार की स्थापना हुई। विधेयक एक नये रूप में संसद में पेश किया गया। लेकिन इसी बीच राष्ट्रीय मोर्चे की सरकार का पतन हो गया। काम फिर टल गया।

राव सरकार का प्रयास

पिछले वर्ष राव सरकार ने पुन: पंचायती राज विधेयक पारित कराने में पहल की। दोनों सदनों की प्रवर समिति की राय ली गई। श्री नाथूराम मिर्धा की अध्यक्षता में संसदीय समिति ने सभी राज्य सरकारों और सांसदों की राय जानी। उसकी रिपोर्ट गत वर्ष सितम्बर में प्राप्त हुई और उसके आधार पर विधेयक तैयार करके संसद में पेश किया गया। संसद के शीतकालीन अधिवेशन में यह विधेयक पारित हो गया। संविधानिक संशोधन विधेयक के रूप में पेश किए गए इस विधेयक को अभी राज्य सरकारों का अनुमोदन प्राप्त होना है। उसके बाद ही वह राष्ट्रपति की स्वीकृति से कानून का रूप धारण कर सकेगा।

राजीव गांधी द्वारा प्रस्तुत विधेयक से संसद में हाल ही में पारित किए गए विधेयक की मूल भिन्नता यह है कि पारित विधेयक में राज्य सरकारों के अधिकारों को अक्षुण्ण रखा गया है। इस विधेयक के तत्व निम्नलिखित हैं:

विधेयक के तत्व

1. पंचायती राज 20 लाख से अधिक आबादी वाले राज्यों में त्रितलीय और 20 लाख तक की आबादी वाले राज्यों में द्वितलीय होगा। इसका अर्थ यह है कि पंचायती राज संस्थान ग्राम सभा, ग्राम-समूह और जिला-स्तर पर कार्य करेंगे। 20 लाख से कम आबादी वाले राज्यों में केवल दो तल-ग्रामसभा और जिला परिषद होंगे।

2. पंचायती संस्थाओं के चुनाव हर पांच वर्ष बाद होंगे।

3. यदि कोई पंचायती संस्था भंग कर दी गई हो तो उसके नए चुनाव छ: महीनों के भीतर कराने होंगे।

4. आबादी के हिसाब से अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित होंगे और कुल एक-तिहाई स्थान महिलाओं के लिए सुरक्षित होंगे।

5. उन्हें वित्तीय और प्रशासनिक अधिकार प्राप्त होंगे जिनका निर्धारण राज्य सरकारें करेंगी।

6. राज्य सरकारें वित्त आयोगों का गठन करेंगी जो पंचायती संस्थाओं को आर्थिक संसाधन सुलभ कराने के बारे में सिफारिशें करेंगे।

7. सांसद तथा विधायक भी अपने-अपने क्षेत्रों की पंचायती संस्थाओं के सदस्य होंगे और उन्हें मताधिकार भी प्राप्त होगा।

8. विधेयक के अधीन संविधान में एक नया अनुच्छेद

(पैरा) जोड़ा जाएगा और 11वीं अनुसूची भी जोड़ी जाएगी। इस अनुसूची में उन क्षेत्रों का उल्लेख है जो पंचायती संस्थाओं को हस्तांतरित किए जा सकते हैं। ये क्षेत्र प्राथमिक स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा और सार्वजनिक वितरण व्यवस्था हैं।

9. पंचायती संस्थाएं अपने आर्थिक संसाधन जुटाने के लिए कर लगा सकेंगी।

मजबूत व्यवस्थाएं

इस प्रकार केन्द्र सरकार ने पिछले अनुभवों के आलोक में पंचायती राज को सफल बनाने के उद्देश्य से विधेयक में कई मजबूत व्यवस्थाएं की हैं। पहली व्यवस्था तो यही है कि पंचायती संस्थाओं के चुनाव की अवधि निर्धारित कर दी गई है। हर राज्य में चुनाव पांच वर्ष के बाद कराने ही होंगे। दूसरी व्यवस्था यह है कि पंचायती संस्थाओं को अनिश्चित काल तक भंग नहीं रखा जा सकता है। भंग पंचायती संस्था के चुनाव छ: महीने के भीतर कराने होंगे।

उक्त दोनों व्यवस्थाएं पिछले अनुभवों पर आधारित हैं। राज्य सरकारें पंचायती राज को समानान्तर शक्ति केन्द्र मानती आई हैं और इसीलिए उन पर आकारण अंकुश लगाती रही हैं। कई राज्यों में वर्षों से चुनाव नहीं कराए गए अथवा वर्षों से पंचायती संस्थाएं भंग पड़ी हैं। अब आगे से ऐसा नहीं हो सकेगा।

पंचायती संस्थाओं की वर्तमान दुर्दशा का मूल कारण भी यही रहा है कि सांसद तथा विधायक, पंचायत-सदस्यों के साथ अधिकारों में भागीदारी के इच्छुक नही रहे हैं। वे पंचायत सदस्यों को ग्रामीण क्षेत्र में अपना प्रतिद्वन्द्वी अथवा विरोधी मानते रहे हैं। अफसरशाही भी पंचायती संस्थाओं से सौतेला व्यवहार करती रही है क्योंकि वे उनकी निरंकुशता में बाधक हैं। कोई भी पंचायती संस्था अब छ: महीने से अधिक काल तक भंग नहीं रह पाएगी। अत: अफसरशाही को मनमानी करने की छूट बहुत कम मिल पाएगी।

स्वागत योग्य कदम

पंचायती संस्थाओं में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए आबादी के अनुपात में प्रतिनिधित्व की व्यवस्था भी सराहनीय है। इससे ग्रामों में दलित- पीड़ित वर्गों को आवाज मिलेगी। अभी तक गांवों में पुराने सामंतवादी सम्बन्ध चले आ रहे हैं और जाति व्यवस्था का भी जोर है। पारित विधेयक में इस कुव्यवस्था पर प्रहार किया गया है जिससे सामाजिक न्याय की दिशा में प्रगति होगी।

महिलाओं के लिए एक-तिहाई स्थानों का आरक्षण बड़ा सोच-विचार कर उठाया गया कदम है। ग्रामीण समाज में महिलाएं काफी पिछड़ी हुई हैं और उन पर पुरूष वर्ग हावी रहता है, यद्यपि ग्रामीण अर्थतंत्र में महिलाओं का योगदान पुरूषों से कम नहीं है। पारित विधेयक में इसी असंगति को दूर करने का स्तुत्य प्रयास किया गया है। इससे महिलाओं में एक नयी जागृति आएगी, उनमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता उत्पन्न होगी और उसके फलस्वरूप ग्रामों में नारी-शक्ति का उत्कर्ष होगा। नारियां पुरूषों के साथ कंधे से कंधे मिलाकर सभी क्षेत्रों में आगे बढ़ेंगी। पंचायती संस्थाओं में भागीदारी की व्यवस्था के फलस्वरूप उनमें साक्षरता का भी प्रसार होगा। फलत: ग्रामों के जीवन में प्रचुर सुधार होगा।

शंकाएं और सुझाव

स्वागत योग्य प्रावधानों के बावजूद विद्वानों तथा समाजशास्त्रियों ने पारित विधेयक की कुछ अपूर्णताओं की ओर भी संकेत किया है और उन्हें दूर करने के लिए कुछ सुझाव पेश किए हैं। उनकी पहली शिकायत है कि प्रस्तावित कानून में ग्राम पंचायतों को ग्राम सभाओं की अपेक्षा अधिक अधिकार दिए गए हैं जबकि ग्राम सभाएं ही ग्रामीण मतदाताओं की पंचायती राज से सम्बन्ध की पहली सीधी कड़ी हैं। यह आलोचना अधिक वजनदार नहीं प्रतीत होती क्योंकि ग्राम सभाओं की सक्रिय भागीदारी ही सफलता की गारण्टी है, अत: पंचायतें ग्राम सभाओं को नजरअंदाज नहीं कर सकेंगी।

एक कमी यह बताई गई है कि पंचायतों को पुलिस-कार्य नहीं सौंपा गया है। उनका कामकाज विकास कार्यक्रमों तक सीमित है। इस कमी की पूर्ति राज्य सरकारें सहज ही कर सकती हैं क्योंकि उन्हें ही पंचायती संस्थाओं के लिए वित्तीय एवं प्रशासनिक अधिकारों के निर्धारण का दायित्व सौंपा गया है और यह आशा की गई है कि वे पंचायती संस्थाओं को ऐसे सभी अधिकार प्रदान करेंगी जो उनके प्रभावी कामकाज के लिए जरूरी हों। उन्हें कानून-व्यवस्था, मामूली न्यायिक अधिकार और भूमि सम्बन्धी दस्तावेजों के रख-रखाव से सम्बन्धित अधिकार प्रदान किए जा सकते हैं। 11वीं अनुसूची में ऐसे अधिकारों का उल्लेख किया गया है।

तीन-तलीय व्यवस्था

पंचायती राज की तीन-तलीय व्यवस्था की भी कुछ लोगों ने आलोचना की है। इनमें तमिलनाडु के अन्ना द्रमुक सांसद शामिल हैं। वे द्वितलीय पंचायती राज के पक्ष में रहे हैं। संसद ने

उनकी आलोचना को गंभीर एवं महत्वपूर्ण नहीं माना। नाथूराम मिर्धा समिति ने इस विषय में सभी राज्य सरकारों से विचार-विमर्श किया था और वह इस निष्कर्ष पर पहुंची थी कि तीन तलीय व्यवस्था ही सर्वोत्कृष्ट है। हां, 20 लाख से कम आबादी वाले राज्यों को इस मामले में छूट दे दी गई है।

सांसदों और विधायकों को पंचायती संस्थाओं में मताधिकार दिए जाने की भी कुछ क्षेत्रों में आलोचना की गई है और यह कहा गया है कि इससे नेतृत्व के स्तर पर विग्रह पैदा हो सकते हैं जिनसे पंचायती संस्थाओं के कामकाज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। यह आशंका पिछले अनुभवों के संदर्भ में कुछ युक्तिसंगत प्रतीत हो सकती है, पर सैद्धांतिक दृष्टि से इसमें जान नहीं है। कारण यह है कि सांसद तथा विधायक भी अपने अपने क्षेत्रों के जन-प्रतिनिधि होते है। वे जनता द्वारा चुने जाते हैं। अत: क्षेत्र के विकास कार्यक्रम में उन्हें भागीदारी से वंचित रखना अनुचित एवं अलोकतांत्रिक होगा। यदि पंचायती संस्थाओं में पूर्ण सामंजस्य कायम हो तो सांसद व विधायकों की भागीदारी वरदान सिद्ध हो सकती है। वे राज्य सरकार में अपनी-अपनी पंचायती संस्थाओं के हितों का प्रतिनिधित्व तथा संरक्षण कर सकते हैं।

विधानमण्डलों में प्रतिनिधित्व

एक बड़ा महत्वपूर्ण सुझाव भी सामने आया है कि वह राज्य के विधानमण्डलों में पंचायती संस्थाओं के प्रतिनिधित्व से सम्बन्धित है। अनुछेच्द 171 के अन्तर्गत विधान परिषदों में एक-तिहाई स्थान स्थानीय निकायों के लिए सुरक्षित हैं। शहरी स्वशासी संस्थाओं के प्रतिनिधि ही इस प्रावधान से लाभान्वित होते रहे हैं। सुझाव दिया गया है कि ग्रामीण तथा शहरी स्वशासी संस्थाओं के लिए विधान परिषदों में प्रतिनिधित्व दुगुना कर दिया जाए और आबादी के अनुपात में इन सुरक्षित स्थानों को शहरी तथा ग्रामीण स्वशासी संस्थाओं को आबंटित कर दिया जाए। इसके लिए कानून में संशोधन जरूरी है। विधान परिषदों में स्नातकों तथा शिक्षकों के लिए सुरक्षित स्थानों की व्यवस्था समाप्त करके पंचायती संस्थाओं को समुचित प्रतिनिधित्व दिया जा सकता है। यह सुझाव फिलहाल चिंतन की परिधि में है।

वस्तुत: पारित विधेयक एक नयी शुरूआत मात्र है। परिवर्तनों और संशोधनों की गुंजाइश हमेशा ही बनी रहती है। कालांतर में जो अनुभव होंगे उनके संदर्भ में परिवर्तन-परिवर्द्धन किए जाते रहेंगे।

असली काम अब शुरू होगा

पंचायती राज विधेयक के संसद में पारित होने से काम समाप्त नहीं हुआ है। सारे विधानमण्डलों को विहित तथा निर्दिष्ट व्यवस्थाओं के अनुसार कानून बनाने होंगे। पंचायती संस्थाओं के उत्तरदायित्वों को पारिभाषित कर कार्यान्वयन के लिए तत्सम्बन्धी वित्तीय एवं प्रशासनिक अधिकार देने होंगे। उनके लिए राज्य वित्त आयोगों की भी स्थापना करनी होगी ताकि उनके आर्थिक स्रोतों की व्यवस्था की जा सके।

पंचायती संस्थाओं का मुख्य कार्य फिलहाल ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को लागू करना होगा। उन्हें ग्रामीण निर्धनों के कल्याण के लिए जवाहर रोजगार योजनाओं को भी क्रियान्वित करना होगा। केन्द्र और राज्य ग्रामीण विकास के लिए बड़ी-बड़ी योजनाएं बनाते रहते हैं। उन पर अरबों, खरबों की राशि खर्च की जाती है। लेकिन उनके पूरे लाभ नहीं मिल पाते हैं। योजना आयोग ने स्वयं यह कबूल किया है कि ग्रामीण विकास के लिए स्वीकृत राशियों का सही-सही उपयोग नहीं होता। आशा की जाती है कि पंचायती संस्थाओं की स्थापना से यह बड़ी शिकायत दूर हो जायेगी, क्योंकि उनमें अब ग्रामीणजनों की निचले स्तर की भागीदारी होगी। बिचौलियों और अफसरशाही की दखलंदाजी का अंत होगा।

यह बड़ी खुशी की बात है कि प्रधानमंत्री ने ग्रामीण विकास के लिए योजना में 30,000 करोड़ रुपये की राशि का प्रावधान किया है। यह राशि आठवीं पंचवर्षीय योजना में आबंटित की गई है। इससे पंचायती संस्थाओं को अपनी कारगुजारियां दिखाने का स्वर्ण अवसर मिलेगा। आशा की जानी चाहिए कि पंचायती संस्थाए ग्राम-स्वराज्य के स्वप्न को साकार करने में सफल सिद्ध होंगी।

बी-4/71, लोधी कालोनी,
नई दिल्ली

चिरकालीन पंचायतों को पुर्नजीवन मिला

✍ यतीश मिश्र

भारत में सहभागी लोकतंत्र के स्वप्न को साकार करने की कुंजी पंचायती राज के कार्यान्वयन में ही है। इसी परिप्रेक्ष्य में स्वतंत्रता के नवोदय काल में ही स्थानीय लोक संस्थाएं, स्थानीय स्वशासन, सामुदायिक विकास योजना, राष्ट्रीय विस्तार सेवाएं शुरु की गईं तथा इन सबको समन्वित एवं सार्थक रूप देने के लिए बलवंत राय मेहता समिति द्वारा अनुमोदित पंचायती राज जैसी योजनाओं पर गंभीरता से विचार किया। आधुनिक लोकतंत्र के ग्रामीणीकरण की प्रक्रिया का यह प्रारंभिक प्रयास था। इस मुद्दे पर प्रांतीय सरकारों, राजनीतिक दलों, शिक्षाविदों एवं पत्रकारिता जगत की अपनी-अपनी मिश्रित प्रतिक्रियाएं थीं। पंचायती राज के परिणामों पर तरह-तरह की अटकलबाजियां भी लगाई गईं। पाश्चात्य जगत के भारतीय राजनीतिक चिंतकों में प्रो. मोरिस जोंस, प्रो. रूडोल्फ, प्रो. पॉल ब्रास एवं एन.डी. पामर ने अपने-अपने विचार रखे। जहां मोरिस जोन्स ने पंचायती राज को भारतीय लोकतंत्र की जड़ को गहराई एवं स्थायित्व प्रदान करने वाले साधन के रूप में देखा वहां रूडोल्फ ने इसे पारंपरिक समाज के राजनीतिक आधुनिकीकरण का माध्यम बताया। दूसरी ओर पॉल ब्रास एवं मैरेन वीनर ने पंचायती राज को ग्रामीण समाज की जड़ता को झकझोरने एवं विशिष्ट तथा आम संस्कृति के बीच टकराव पैदा करने वाली योजना के रूप में देखा। प्रो. रजनी कोठारी एवं लुसियन पाई ने पंचायती राज को विकेंद्रित लोकतंत्र के विकास का माध्यम बताया है। मार्क्सवादियों ने इसे ग्रामीण बुर्जुआ की पकड़ को मजबूत करनेवाला एक उदारवादी षड़यंत्र बताया और गैर कांग्रेसियों ने इसे ग्रामीण राजनीति के कांग्रेसीकरण की योजना के रूप में देखा। लेकिन इन तमाम मतभेदों के बावजूद भी एक बात पर आम सहमति थी कि भारतीय लोकतंत्र को गांवों तक पहुंचाना आवश्यक है और इसके लिए पंचायती राज से बेहतर विकल्प तत्काल उपलब्ध नहीं है। इसी मान्यता एवं उद्देश्य की पृष्ठभूमि में लोगों ने पंचायती राज की योजना को माना एवं इसे देर-सवेर सभी प्रांतीय सरकारों ने किसी न किसी रूप में अंगीकार किया। इसे हम पंचायती राज योजना की सार्थकता एवं भावी सफलता का स्वयं सिद्ध प्रमाण कह सकते हैं।

अब प्रश्न है कि यह पंचायती राज क्या है एवं यह सहभागी लोकतंत्र को बहाल करने में कहां तक सफल हो सकता है? सहभागी लोकतंत्र का तात्पर्य पारम्परिक उदारवादी लोकतंत्र के कागजी आदर्शों की व्यावहारिक परिणति है। इसके अंतर्गत लोकतंत्र को निम्न स्तर तक पहुंचाने का प्रयास किया जाता है, जहां हर व्यक्ति चुनावी प्रक्रिया में भाग लेना आवश्यक समझे। शीर्षस्थ लोकतंत्र में जमीन की जनता अपने आपको इस प्रक्रिया का सक्रिय सहभागी नहीं मानती क्योंकि राष्ट्रीय चुनाव में मुद्दे राष्ट्रीय या अंतराष्ट्रीय स्तर के होते हैं। प्रांतीय चुनाव में भी मुद्दे प्रांतीय स्तर के होते हैं, जिसमें आम एवं अशिक्षित जनता अपने आपको अलग-थलग महसूस करती है। लेकिन पंचायती स्तर के चुनाव में मुद्दे ग्राम और मुहल्ले पर आ जाते हैं, जिससे हर व्यक्ति अपने आपको प्रभावित महसूस करता है। साथ ही चुनावी प्रक्रिया में भाग भी लेना चाहता है। उम्मीदवार भी उसके पास एवं उसकी भाषा में प्रचार कार्य करता है। मुद्दे भी गली, नाली, पाठशाला, चौपाल, मिट्टी का तेल, चीनी, गांव की सड़क, मंडी, पुल, पानी, सिंचाई, खाद-बीज इत्यादि प्रत्येक नागरिक के जनजीवन से संबंधित होते हैं। यहां जनता को चाहे-अनचाहे अपने आपको भागीदार बनाना पड़ता है। अत: आम आदमी की अंतत: लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भागीदारी हो जाती है, जिससे श्री सी.बी. मैकफरसन का सहभागी लोकतंत्र का सपना एक कारगर रूप लेता प्रतीत होता है। यह पंचायती राज और ग्रामीण स्तर पर चुनाव सम्पन्न होने से ही संभव हो सकता है।

ग्राम पंचायत का अतीत

जब हम कहते हैं कि भारत गांवों का देश है तो केवल इसलिए नहीं कि यहां की अधिसंख्य आबादी गांवों में बसती है बल्कि इसलिए भी कि इसका एक अलग वजूद है, इसमें एक अनवरतता है, इसकी अपनी विशेषताएं हैं। वैदिक काल तथा उसके बाद भी कई साम्राज्यों का उत्थान और पतन हुआ। लेकिन सामाजिक संगठन के रूप में - 'पंचायत' ने अटूट रहकर गांवों पर सामाजिक नियंत्रण बनाए रखा। इसकी पुष्टि करते हुए मेटकाफ ने कहा है कि ''ग्रामीण समुदाय एक छोटे गणतंत्र के रूप में रहे हैं। इनके आसपास कई क्रांतियां हुई, कई साम्राज्य बदले। पर ये न बदले। यही इनकी सांगठनिक व सांस्कृतिक एकता 'भारतीयता' कहलाई जो देश को आजादी दिलाने में परोक्ष रूप से लोगों का संबल बनी।''

वैदिक काल में गांवों का प्रशासन कर्मचारियों के जिम्मे था, जिसे सलाह देने के लिए बुजुर्गों की एक परिषद हुआ करती थी। इसके नेता को ग्रामीणी कहा जाता था। यह राजा और प्रजा

के बीच प्रशासनिक सेतु का काम करता था। वह रक्षा प्रमुख तो होता ही था साथ ही कर वसूली का काम भी अपनी देखरेख में करवाता था। इस काम में उसे पूरे गांव का सहयोग प्राप्त था।

मौर्य काल में ग्राम प्रशासन मुख्यत: कृषि से संबंधित था। एक गांव में लगभग 100 से 150 परिवार रहते थे। इसकी सीमाएं नदी, पहाड़, जंगल, तालाब व वृक्षों से तय की जाती थीं। ग्राम प्रशासन के मुख्य स्तंभ थे - अध्यक्ष, समख्यक (लेख-पाल), स्थानिका (विभिन्न स्तर के कर्मचारी), चिकित्सक तथा अश्वदमक (घुड़सवारी प्रशिक्षक)। इन्हें राजा की तरफ से मुफ्त व करमुक्त जमीन दी जाती थी। लेकिन इस जमीन को न तो वे बेच सकते थे न बंधक रख सकते थे।

इस काल की एक खास बात यह थी कि राजा इनके प्रशासन में अधिक हस्तक्षेप नहीं करता था। प्रत्येक गांव की एक अपनी सभा थी। इसकी बैठक विशाल पेड़ की छाया में होती थी। इस बैठक में संबंधित गांव की समस्त -धार्मिक व सामाजिक समस्याओं पर पहले बहस, फिर विचार किया जाता था। दोषी पाए जाने पर अपराधी को दंड भी दिया जाता था। इसके अलावा ग्रामीणों के लिए यह विभिन्न प्रकार के मंनोरजन का इंतजाम करवाती थी। इस तरह तब के ग्रामीण स्वतंत्र, स्वशासित व एक अनूठे गणतंत्र में जीया करते थे। इसके बाद कई साम्राज्य आए गए लेकिन ग्रामीण भारत कमोबेश वैसा ही रहा।

लेकिन ब्रिटिश राज के आते ही देश में राजनैतिक, आर्थिक व भौतिक परिवर्तन हुए। मुख्य बदलावों में गांवों के भौतिक स्वरूप के अलावा इसके प्रशासनिक ढांचे में कुछ विशेष कर्मचारी (पुजारी, लुहार, बढ़ई, ग्रहज्ञाता) जुड़े; पंचायत परिषद का गठन हुआ; तथा जमींदार और भूमिहीनों का उदय हुआ। जमींदार सरकार और जनता के बीच मध्यस्थ होकर मुख्यत: राजस्व वसूली का काम किया करते थे। इस दौर में पूरा भारतीय प्रशासन केंद्रित हो गया। सारे निर्णय ऊपर से लिए जाने लगे। योजनाओं क्रियान्वयन व दिशा निर्देश में लोगों की सहभागिता समाप्त हो गई।

सदियों से संजोए ग्रामीण प्रशासन की विशेषताएं विकल्प हो गई। पारंपरिक स्वशासित गांव को ब्रिटिश साम्राज्य के केंद्रित प्रशासन ने नष्ट कर दिया। ग्राम-प्रमुख तथा लेखापाल जैसे प्रतिष्ठित पद को नष्ट कर दिया। लोगों को न्याय दिलाने के लिए कोर्ट और कचहरी की स्थापना की गई। सामाजिक और धार्मिक परंपराओं पर आधारित न्याय की जगह कानून ने ली। ब्रिटिश प्रशासक पंचायत के निर्णयों को नकारने लगे। इस तरह अपनी जमीन तथा अपने परिवेश में विकसित एक निष्पक्ष एवं निर्बाध न्याय प्रक्रिया का अंत कर दिया गया।

राष्ट्रीय आंदोलन के काल में पंचायत को जीवित करने की कुछ कोशिशें की गईं। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सर्वप्रथम 1909 में 'ग्राम पंचायत' को याद किया कांग्रेस पार्टी ने लाहौर में हुए अपने 24वें अधिवेशन में इस बाबत एक प्रस्ताव पास किया। इसी प्रस्ताव को पुन: इलाहाबाद में हुए 25 वें अधिवेशन में भी रखा गया। यद्यपि इस बीच ग्राम पंचायत काफी उत्साह पैदा नहीं कर सकी। फिर भी इसका अपना महत्व रहा है। ब्रिटिश सरकार द्वारा इस दिशा में कोई कदम न उठाए जाने पर कांग्रेस ने लाहौर के अपने 28वें अधिवेशन में पुन: इस मुद्दे को उठाया और इस पर क्षोभ व्यक्त किया।

सन् 1915 में गांधीजी के दक्षिण अफ्रीका से लौटते ही पूरे देश में 'स्वदेशी' की लहर दौड़ गई। इस भावना से अभिभूत गांधीजी ने 14 फरवरी 1916 को मद्रास मिशनरी सम्मेलन में पहली दफा ग्राम पंचायत की मांग की। उन्होंने एक देशज संस्था की मांग की जिसमें जनता शासन स्वयं चला सके। इशारा 'स्वराज' की ओर था। तब दबाव में आकर ब्रिटिश सरकार ने इस दिशा में कई असफल प्रयास किए, जिसमें 'डिसेंट्रलाइजेशन कमीशन' भी एक था। रॉयल कमीशन आन डिसेंट्रलाइजेशन ग्राम पंचायतों की असफलता और रिपोर्ट में दिए गए अन्य सुझाव तो ठीक हैं परन्तु पंचायतों को जिलों के अधीन रखने की बात कर इसने पंचायतों की स्वतंत्रता पर कड़ा प्रहार किया। राष्ट्रवादियों को मानना था कि ऐसा करने से विकेन्द्रीकरण का मूल-भाव ही समाप्त हो जाएगा।

आजादी के बाद के शुरूआती दौर में भी पंचायती राज की उपेक्षा ही की गई। संविधान निर्माताओं ने संविधान के प्रथम प्रारूप में इसकी चर्चा तक करने की जरूरत नहीं समझी। कहना मुश्किल है कि उनकी मानसिकता पर विदेशी हावी थे या स्वदेशी। 'स्वराज' के उपासक राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को संविधान निर्माताओं की यह उपेक्षा अच्छी नहीं लगी। उन्होंने तत्काल इस ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा कि - "इस आजादी में जनता की इच्छा मुखरित होनी चाहिए। अत: पंचायतों को न सिर्फ जीवित करना चाहिए बल्कि इसे ज्यादा से ज्यादा अधिकार भी देने चाहिए। तभी हम आम जनता की भावनाओं का आदर कर सकेंगे।" तब संविधान निर्माताओं ने गांधीजी के 'स्वराज' से प्रेरणा लेते हुए राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में पंचायती राज को समाहित कर उसे संविधान के अनुछेच्द 40 के भाग चार में रखा।

स्वतंत्रोत्तर शासकों ने पंचायती राज को बढ़ावा एवं जीवित रूप देने की कई कोशिशें कीं। कभी विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं

के माध्यम से तो कभी नई-नई योजनाओं को लागू करके। पंचायतों को विकास कार्यक्रमों के सबसे निम्न स्तर पर एक सशक्त इकाई के रूप में माना जाता रहा है। ग्रामीण विकास के सभी महत्वपूर्ण आयामों में इसकी प्रमुख भूमिका होती है। इसे हम राष्ट्रीय विकास की सभी प्रशासकीय संरचनाओं का आधार कह सकते हैं। विभिन्न राज्यों में पंचायतों की संख्या, इसका विकास एवं विकास कार्यक्रमों में इसकी भूमिकाओं में अंतर है। इसके कई कारण हैं। प्रादेशिक सरकारें अपनी-अपनी राजनीतिक इच्छा और सुविधाओं के अनुसार पंचायत के स्वरूप और प्रकार को अपनाती है। बलवंत राय मेहता समिति की रिर्पोट को कहीं अंशत: तो कहीं पूर्णत: लागू किया गया है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस बात पर जोर दिया गया है कि ग्रामीण विकास की सफलता के लिए एक सक्रिय व मजबूत ग्रामीण इकाई आवश्यक है। एक ऐसी इकाई जो सम्पूर्ण समुदाय का प्रतिनिधित्व करे और सरकारी मदद से गांव के कल्याणार्थ चलाए जा रहे प्रोजेक्ट के लिए संबंधित लोगों की सहभागिता सुनिश्चित करे। सरकारी आंकड़े बताते हैं कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में पंचायत की भूमिका अच्छी रही। वर्ष 1950-51 में पंचायतों की संख्या 83,093 से बढ़कर वर्ष 1955-51 में यह 117,593 हो गई। पंजाब, उत्तर प्रदेश और मैसूर के प्रत्येक गांवों में पंचायतें कायम थीं। जबकि बहुत सारी पंचायत विकास संबंधी गतिविधियों के अनुभव से अभिनज्ञ रहे फिर भी ग्रामीण नेतृत्व, ग्राम सहकारिता, गांवों की सामाजिक, आर्थिक विकास व श्रमदान जैसी गतिविधियों में उपर्युक्त प्रदेशों की अधिकतर पंचायतों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सहकारिता, विकास योजनाओं के विस्तार एवं सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में पंचायत की महत्वपूर्ण भूमिका पर बल दिया गया। इसमें यह भी कहा गया कि आर्थिक समृद्धि और सहकारी प्रयास जैसे कार्यक्रमों में भी पंचायत का खासा योगदान हो सकता है। तृतीय पंचवर्षीय योजना का कहना है कि बहुतेरे राज्यों ने प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण कानून पास कर दिए हैं और बाकी राज्य भी इसे जल्दी ही पूरा कर लेंगे। राष्ट्रीय विकास परिषद में इस पर सहमति थी कि किसी भी प्रजातांत्रिक देश का आधार तभी मजबूत हो सकता है जब उस देश के गांवों में भी सही मायने में प्रजातंत्र हो। और इसके लिए ग्राम पंचायत तथा ग्रामीण सहकारिता बहुत ही महत्वपूर्ण संस्थाएं हैं। विकास कार्यों को लागू करवाने का दायित्व पंचायत समिति पर होता है जो जिला परिषद और ग्राम पंचायत के साथ मिलकर काम करती है। जिला एवं प्रखंड स्तर पर योजनाओं को सफल बनाने के लिए निम्न चार तरीके बताए गए हैं। (1) पंचायत समिति और पंचायत स्थानीय संसाधनों को संघटित करेगी तथा लोगों का सहयोग प्राप्त करेगी। (2) स्वीकृत योजनाओं के लिए उपलब्ध आवश्यक वस्तुओं की सही समय पर आपूर्ति की जिम्मेदारी जिला प्रशासन पर होगी। (3) पंचायतों और पंचायत समितियों को बेहतर कृषि उपज के लिए कोशिश करनी चाहिए। (4) पंचायत समितियों व पंचायतों को ऐसे उपाय करने चाहिए जिससे कि आप समाज के गरीब तबके के लोगों का जीवन स्तर ऊंचा उठ सकें। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कई राज्यों ने अपनी स्थानीय जरूरतों के मुताबिक विकेन्द्रीकरण को अपनाया है।

विकेंद्रीकरण की आवश्यकता

हाल के वर्षों में राजनीतिक पार्टियों और बुद्धिजीवियों के बीच भारतीय जनता की प्रजातांत्रिक इच्छाओं की पूर्ति को लेकर बहस होती रही। मतभेदों के बावजूद यह मत उभर कर आया कि इस दिशा में आवश्यक कदम उठाये जाने चाहिए और ऐसा हुआ भी। आज जबकि देश में क्षेत्रीयता की भावना अपने उफान पर है, जाति संघर्ष और इसके परिणामों को महसूस किया जा रहा है, गांव स्तर पर शक्ति प्रदर्शन बदस्तूर जारी है। ऐसी हालत में प्रशासन के सबसे निम्न स्तर को राजनैतिक आर्थिक स्वायत्ता देना एक जोखिम भरा कदम कहा जा सकता है। लेकिन यह भी नाममुकिन है कि सारी शक्तियों को केंद्रित कर देश की एकता -अंखडता को बनाए रखा जा सके। ऐसा करना न सिर्फ भारतीय जनता के साथ वादाखिलाफी होगी बल्कि जन सहभागिता की धारणा को नकारते हुए राष्ट्रीय विकास में बाधक भी होगा।

हमारी राजनीतिक व्यवस्था के गतिशील न हो पाने का एक प्रमुख कारण इसका केन्द्रित होना भी है। अत: निम्न स्तर की प्रजातांत्रित संस्थाओं को निर्णय लेने के अधिकार देकर ही इसे गतिशील बनाया जा सकता है। देश में व्याप्त गरीबी को दूर करने के लिए केन्द्र खुद योजनाएं बनाती है और इसे अपने अभिकरणों द्वारा लागू करवाती है। योजनाओं की सम्पूर्ण सफलता न मिलने पर या तो निहित स्वार्थी तत्वों पर दोष मढ़ा जाता है या लागू करने वाले अभिकरणों पर। लेकिन सच्चाई यह कि योजनाओं का नियोजन स्थानीय हालतों के प्रतिकूल होता है तथा वांछित लक्ष्य अधूरा रह जाता है। इसे राजनैतिक प्रक्रिया (विकेंद्रीकरण) द्वारा ही हल किया जा सकता है।

एक केंद्रित राजनैतिक व्यवस्था में राजनैतिक शक्ति (जो व्यवहारत: शक्ति ही है), तथा शक्ति सम्बन्धों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। यह एक अभिजन वर्ग में सिमटा होता है। लेकिन जैसे ही व्यवस्था विकेंद्रित होती है, उससे जुड़ी शक्तियां 'कुछेक' से निकलकर 'बुहतेरों' के पास चली जाती है। पर शक्तियों का बंटवारा विकेंद्रीकरण के तरीके, राजनैतिक इच्छा शक्ति तथा जन जागरूकता पर निर्भर करता है। अन्यथा विकेंद्रित व्यवस्था आम लोगों में महसूस नहीं की जाती।

राज्यों को संसाधन और स्वायत्ता दिए बगैर विकेंद्रीकरण का कोई मतलब नहीं। पंचायतों नगर पालिकाओं का चुनाव करवा लेने मात्र से ही विकेंद्रीकरण नहीं हो पाता। जरूरत है इन निकायों के नियमित चुनाव कराने की, इन्हें पर्याप्त राजनैतिक आर्थिक शक्तियां प्रदान करने की ताकि ये अपने विकास कार्यक्रम खुद तैयार कर इसे क्रियान्वित करें।

विकेंद्रीकरण का स्वरूप रहे इसके लिए आवश्यक है कि राष्ट्रीय स्तर के नेता आधुनिक पोपुलिज्म का प्रयोग न करें। राजनैतिक संस्थाओं के सबसे निचले स्तर में हस्तक्षेप न के बराबर हो जिससे इन्हें स्वाभाविक नेतृत्व के विकास करने का मौका मिल सके।

विभिन्न राज्यों के बीच शक्तियों का बंटवारा इस ढंग से होना चाहिए जिससे राज्यों के बीच एकरूपता बनी रहे। अगर किसी राज्य के पास बहुत कम या अत्याधिक धन हो जाएगा तो वह संघ से अलग होने की कोशिश कर सकता है। अत: शक्तियों व धन के बंटवारे में राज्यों के बीच विभिन्नता नहीं होनी चाहिए। कुछ विशेष परिस्थितियों में ऐसा करने में कोई हर्ज नहीं। राजनैतिक विकेंद्रीकरण न सिर्फ हमारी संघीय व्यवस्था की मांग है बल्कि वर्षों से भारतीय ग्रामीण व शहरी जनता को उसके हक को लौटाया जाना भी है। इससे प्रशासन की जिम्मेदारी भी कम हो जाती है जब समुदाय अपना भविष्य आपसी मेलजोल तथा समझ से तय करता हैं।

आज हमारा देश दो संसार (शहर और गांव) में विभक्त है। गांवों से गरीबों का पलायन लगातार जारी है। पहले से ही भीड़भरे-प्रदूषित शहर इस पलायन से और भी समस्याग्रस्त हो गई है। ऐसी हालत में विकेंद्रीकरण ही एक उपाय है जिससे गांवों में अधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध हो सकेंगे, लोगों की हताशा में कमी आएगी तथा पलायन रुक पाएगा।

आज प्रशासन के हर स्तर पर भ्रष्टाचार व्याप्त है। अफसरशाही से आम जनता परेशान है। इन सबो की जड़े केंद्रित विकास की योजनाओं में हैं। आम आदमी की जरूरतों को मुठ्ठी भर लोगों ने समझने की कोशिश की है जिससे इनके द्वारा नियोजित कार्यक्रमों में लोगों की सहभागिता नगण्य रही है। पर जब लोगों की जरुरतों की पूर्ति उनके ही तरीकों व माध्यम से की जाएगी तो उपरोक्त समस्याएं नि:सन्देह ही कम हो जाएगी। विकेंद्रित योजनाओं तथा उनके क्रियान्वयन के कारण दलालों की भूमिका स्वत: ही समाप्त हो जाती है जिससे देश का पैसा नाहक बर्बाद होने से बच सकता है। यह मनोवैज्ञाकि तथ्य है कि विकास कार्यों में जनभागिता होने से लाभार्थियों को मानसिक संतुष्टि मिलती है। तब व्यक्ति देश की सामाजिक राजनैतिक प्रक्रिया में खुलकर भाग लेता है। वह राष्ट्र के प्रति अपनी जिम्मेवारी समझता है और एक जिम्मेवार नागरिक

बन पाता है। यह सर्वविदित है कि देश की एकता अखंडता व चतुर्दिक विकास के लिए जिम्मेवार नागरिकों का होना कितना आवश्यक है।

एक केंद्रित राज्य व्यवस्था प्रजातांत्रिक नहीं हो सकती। यह स्वायत्तता तथा स्वअनुभूति जैसे मूल्यों के भी विरूद्ध होती है। हमने प्रजातांत्रिक समाजवाद अपनाया है। अत: इस व्यवस्था को मूर्त रूप देने के लिए भी आवश्यक है कि विकेंद्रीकरण किया जाए।

सरकारी प्रयास

पंचायती राज को मजबूत करने के लिए गठित समितियों की एक लम्बी सूची है जिसमें अशोक मेहता समिति, डॉ. जी.वी. के.राव समिति, डॉ लक्ष्मीमल सिंघवी एवं पी.के. थुंगन की उप समिति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। स्वर्गीय राजीव गांधी ने लोकसभा में 64 वां संविधान संशोधन विधेयक पेश किया जिसे लोकसभा ने 10 अगस्त 1989 को पारित कर दिया। राज्य सभा में पारित न हो पाने के कारण यह कानून न बन सका। फिर एक असफल कोशिश 7 सितंबर 1990 को 74वां संशोधन विधेयक पेशकर श्री वी.पी. सिंह ने किया। 10वीं लोकसभा के गठन के बाद 16 सितंबर 1991 को 72 वां संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा में पेश किया जिसे दिंसबर 1991 में संसद की संयुक्त समिति को सौंपा गया। अंत में 22 दिसंबर 1992 को लोकसभा में तथा 23 दिंसबर को राज्यसभा में यह पारित हो गया।

अब गांव की पंचायतों को गांवों की विकास योजनाएं बनाने और उनको कार्यान्वित करने का आधिकार मिल गया है। इससे ग्रामीणों को अपने देश के लोकतंत्र में भीगदारी का अधिकार प्राप्त हो गया है। पंचायती राज संस्थाओं को संसद और राज्यों की विधान सभाओं की तरह संवैधानिक मान्यता मिल गई है। विधेयक में पंचायतों के चुनाव निश्चित समय पर कराने, उनमें महिलाओं, पिछड़े वर्गों तथा अनुसूचित जातियों, जन जातियों को आरक्षण देने की व्यवस्था भी की गई है।

विधेयक के माध्यम से इसे संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में जोड़ा गया है। इससे ग्राम पंचायतों को सही अर्थों में भूमि सुधार, लघु सिंचाई, ग्रामीण आवास, पेयजल, बिजली, ग्रामीण सड़कें जैसे विकास कार्यक्रमों को अपनी आवश्यकतानुसार क्रियान्वित करने के अवसर प्राप्त हो सकेंगे। अब ऊपर से थोपी गई असमानयोजनाओंके कारण पैदा होने वाली विषमताएं व जटिलताओं की परेशानियों से ग्रामीण जनता बच पाएगी।

इसके तहत गांव विकास खंड व जिला स्तर पर पंचायतों के चुनाव भंग होने के छ: महीने के भीतर कराया जाना आवश्यक हो गया है। गांव की आबादी के हिसाब से महिलाओं, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों का प्रतिनिधित्व हो सकेगा। पंचायतों के चुनाव पूरी तरह राज्य निर्वाचन आयोग के अधीन कराये जाने की व्यवस्था इसमें की गई है। पंचायत स्तर पर मतदाताओं के प्रति जिम्मेदार चुने हुए निकाय होने की वजह से जवाहर रोजगार योजना के कार्यान्वयन में लोगों की प्रत्यक्ष भागांदारी हो सकेगी। यह कदम गांवों के समग्र विकास की दिशा में एक सही पहल है। पंचायत समिति के सदस्यों की आयु 21 वर्ष कर दिए जाने के कारण युवकों को अधिकाधिक भागीदारी के अवसर भी मिल सकेंगे।

आजादी की लड़ाई के दिनों से ही कांग्रेस का सपना रहा है कि वह देश में उस पंचायती राज को फिर से ला सके जो सदियों तक भारत की सामाजिक संरचना की बुनियाद रहा है। मौजूदा संशोधन बिल इस सपने को न केवल साकार करने की एक कोशिश है बल्कि इसका विस्तार भी है। हमारे देश के नागरिकों को नियंत्रित करने वाली निगम व कमेटियों के चुनावों की अनिमियतता जिस तरह नियमित होती रही है, उससे इन प्रजातांत्रिक संस्थाओं का होना-न-होना कोई खास मतलब नहीं रखता। ग्राम पंचायत तथा पालिकाओं का चुनाव घोषित-स्थगित होना इतना आसान है कि किसी को यह विचित्र नहीं लगता। अब उम्मीद की जाती है कि सरकारी अनुदान को तरसते ये स्थानीय निकाय भविष्य में आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होंगे। भारतीय जनता तथा सरकारों की अग्नि परीक्षा अब इस अर्थ में है कि इन पंचायतों और पालिकाओं का कैसा उपयोग देश के विकास के लिए ये करती हैं। हमारी पुरानी सामाजिक संस्थाएं जिस तरह से प्रतिकूल परिस्थितियों में भी सामाजिक सम्बन्धों को अटूट बनाए रखा, उसी तरह यदि आज की ये संस्थाएं सामाजिक राजनैतिक झंझावतों से अपनी सभ्यता, संस्कृति व देश की एकता को बरकरार रख लेती है तो निश्चय ही यह ग्रामीण प्रजातंत्र की जीत होगी।

सी-41 रीड्स लाईन,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली-110007

पंचायत व्यवस्था और साक्षरता कार्यक्रम

✍ डा. हीरालाल बाछोतिया

भारत में पंचायत व्यवस्था शुरू से रही है। ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि वैदिक काल के आरम्भ में ग्राम का प्रबंध गांव के मुखिया द्वारा होता था जिसे ग्रामिणी कहा जाता था। गांव की चौपाल पर इस सभा के सदस्य बैठकर चर्चा करते थे। इस "ग्रामिणी" का उल्लेख रामायण में भी मिलता है।

गांव किस प्रकार एक राजनैतिक इकाई के रूप में कार्य करता था इसका संकेत "जातक कथाओं" में भी मिलता है। इसके अनुसार गांव का मुखिया गांव के प्रबंध के लिए उत्तरदायी था। कुछ स्थानों पर की गई गांव की खुदाई में प्राप्त प्रमाणों से मालूम होता है छठी शताब्दी में गांवों में ऐसी सभा अस्तित्व में थी। ग्राम सभा के मुख्य कार्य थे:

न्याय करना : जातक कथा, कौटिल्य अर्थशास्त्र आदि ग्रंथों में इस तरह के संकेत हैं कि गांव के झगड़ों का निपटारा किस प्रकार किया जाता था।

ग्राम सभा : कौटिल्य अर्थशास्त्र में यह विवरण भी है कि मौर्य काल में केन्द्रीय सरकार की ओर से ग्राम रक्षा का प्रबंध था। मनु ने भी इस प्रकार की रक्षा केन्द्रीय सरकार द्वारा करने की ही अनुशंसा की है।

ह्वेनसांग ने यह उल्लेख किया है कि गुजरात, काठियावाड़ और महाराष्ट्र में कस्बों के गांवों के चारों ओर रक्षा के लिए एक दीवार होती थी।

गांव की आंतरिक सुरक्षा, ग्रामवासियों की जिम्मेदारी थी: विशेष रूप से कौटिल्य के अर्थशास्त्र में उल्लेख मिलता है कि गांव में व्यापारी का सामान खो जाने पर गांव का मुखिया इसका दंड देता था। अन्य ग्रंथों में गांव के चौकीदार "प्रतिहार" के बारे में लिखा है कि वह गांव के सेवकों में से एक होता था।

सरकारी मकान, घाट इत्यादि बनाना : ग्राम पंचायत के कर्तव्य गांव में पंचायत घर, पानी की बावड़ी, मन्दिर, तालाब, बगीचा, कुएं बनवाना आदि था। श्री एल्फीनिस्टग्रे अपनी रिपोर्ट में लिखते हैं कि पेशवा काल में इन कार्यों के लिए सरकारी नौकरों से वसूली होती थी और लगान का कुछ भाग इसके लिए निश्चित था।

सरकारी कर वसूली : जातक कथाओं में यह वर्णन मिलता है कि राज्य खर्च के लिए लोगों से कर वसूल किया जाता था। इस आशय का उल्लेख महाभारत में भी मिलता है।

ग्राम के मुखिया का एक काम लगान वसूल करना भी था। शाहजहां के समय तक लगान अनाज के रूप में वसूल किया जाता रहा।

शिक्षा : शिक्षक को भृतकाध्यापक कहा गया है। कुछ खुदे हुए लेखों में कालिज जैसी संस्थाओं का भी विवरण है। बीजापुर जिले के सलगोटी गांव में ऐसी संस्था का उल्लेख है। इस संस्था में 26 छात्रालयों का भी विवरण है। पाटन गांव में भी एक ऐसा कालिज था जिसके व्यय के लिए किसान लोग अनाज देते थे।

राज्य और ग्रामसभाओं के संबंध : ग्राम सभा में राज्य का अधिक हस्तक्षेप नहीं था। सर चार्ल्स मेटकाफ ने बताया है कि सन् 1930 तक ग्राम सभाएं अपने आप में छोटे-छोटे गणतंत्रों की भांति थीं।

पंचायतों का ह्रास : मुगल राज्य में ही इनका पतन होना आरम्भ हो गया था। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी लोगों से सीधी मालगुजारी वसूल करना आरम्भ कर दिया था। फिर न्यायालयों, राजकीय कार्यालयों और शिक्षा केन्द्रों की स्थापना शहरों में हो जाने से ग्राम्य जीवन का ह्रास हो गया क्योंकि गांवों का कोई महत्व न रहा।

पंचायतों की पुनः प्रतिष्ठा : सन् 1937 में कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने पंचायतों को पुनः प्रेरणा प्रदान की। स्वतंत्रता प्राप्ति के परिणास्वरूप तो इस क्षेत्र में अनेक विधानात्मक गतिविधियां आरम्भ हुईं। योजना आयोग ने सिफारिश की कि दस वर्ष के भीतर सभी राज्यों में पंचायतों की स्थापना का कार्यक्रम तय कर दिया जाए। इसके अंतर्गत 244,594 पंचायतें बनाई गई थीं।

आजादी के बाद शुरू की गई द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस बात पर विचार किया गया कि पंचायत जैसा संगठन ब्लाक एवं जिला स्तर पर भी हो। जब तक कोई कार्यक्रम या सुझाव आये अंतरिम काल के लिये जिला एवं ब्लाक समितियां बनाई गई। एक कमेटी बनाई गई जिसने इस पर सुझाव दिये और इसके विकेन्द्रीकरण के सुझावों पर नेशनल डवलपमेंट कांउसिल ने भी

सन् 1958 में विचार किया। इसमें सुझाव था कि पंचायत और सहकारी समितियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। सब राज्य सरकारों को कहा गया कि वे इस प्रकार से कानून बनायें। सन् 1959 के पश्चात बलवंत राय मेहता कमेटी ने अपनी सिफारिशें पेश की। इसके आधार पर आंध्र प्रदेश, आसाम, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब और राजस्थान में इस आशय के कानून बने। मध्यप्रदेश एवं उत्तर प्रदेश में भी कानून बने और मध्य प्रदेश ने नवम्बर 1962 से इसे लागू भी कर दिया था।

पंचायती राज में विशेष बात यह है कि ग्राम विकास कार्यक्रम की जिम्मेवारी ब्लाक पंचायत समिति की थी जो गांव में ग्राम पंचायत द्वारा जिला समिति की देख-रेख में कार्य करती थी। इसमें स्थानीय कार्यक्रम लोगों के चुने सदस्यों द्वारा ही बनाये गए थे। इसका आशय यह था कि ग्राम विकास की योजना ग्राम स्तर पर ही बने जिससे ग्रामवासी इस कार्यक्रम को अपना कार्य समझें तथा गांव के कार्यक्रम बनाने में तकनीकी विशेषज्ञों के सुझाव ब्लाक स्तर पर विस्तार कार्यकर्ताओं और पंचायत समितियों को प्राप्त हों।

ग्राम विकास और साक्षरता कार्यक्रम : ग्राम विकास में पंचायतों की भूमिका में साक्षरता कार्यक्रमों से अमित सहायता मिल सकती है। साक्षरता कार्यक्रमों का उद्देश्य निरक्षरता का उन्मूलन कर लोगों को आत्मनिर्भर बनाना है। यदि जनता में जागृति आएगी तो अतत: ग्राम विकास का कार्य बढ़ेगा। जरूरत इस बात की है कि पंचायतें साक्षरता प्रसार में सक्रिय योगदान दें।

भारत में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, ग्राम विकास कार्यक्रम के तहत 1978 में आरम्भ किया गया था। प्रौढ़ शिक्षा के अंतर्गत 15 से 35 आयु का वह वर्ग शामिल था जो अशिक्षा के कारण आर्थिक एवं सामाजिक रूप से अत्यंत पिछड़ा हुआ है। ऐसे लोगों की संख्या अब भी बहुत है, जो पढ़ना लिखना नहीं जानते। इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है, कि विशेषत: 15 से 35 वर्ष की कमाऊ उम्र वाले प्रौढ़ों पर।

अशिक्षित रह जाने के कारण पूरे परिवार का दृष्टिकोण शिक्षा के प्रति उदार नहीं बन पाता और ऐसे परिवारों में बच्चों के अशिक्षित रह जाने की अधिक संभावना बनी रहती है। इसलिए प्रौढ़ों के लिए अनौपचारिक शिक्षा सुविधा को, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है।

निरक्षर प्रौढ़ों में बड़ी संख्या अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं महिलाओं की है। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत साक्षरता के अतिरिक्त व्यावसायिक दक्षता और चेतना जागृति पर भी बल दिया जाता है। ग्रामीण प्रौढ़ों को शिक्षित और प्रशिक्षित करने में ग्राम विकास से संबंधित सभी विभागों और रोजगार का प्रबंध करने वाली एजेंसियों का भी सहयोग मिलता है।

इस दृष्टि से प्रौढ़ शिक्षा के अंतर्गत उन सभी सामाजिक संस्थाओं एवं व्यवहारों को सम्मिलित किया जा सकता है, जो मानव जीवन से संबंधित हैं अथवा उसे किसी न किसी रूप में प्रभावित करते हैं। प्रौढ़ शिक्षा की अवधारणा से साक्षरता पर ही बल नहीं दिया गया है, वरन इसे पिछड़े वर्गों में उनमें सामाजिक आर्थिक वातावरण के प्रति चेतना लाने व उनकी क्षमताओं के विकास की निरंतर प्रक्रिया के रूप ग्रहण किया गया है, जिससे वे देश के सर्वांगीण विकास में सक्रिय भूमिका निभा सकें।

ग्रामीण विकास की कई योजनाएं क्रियान्वित करने के बावजूद पिछड़े वर्ग अपने अधिकारों एवं विकास के लिए दूसरों पर निर्भर हैं। यह निर्भरता और अज्ञानता ही विकास-प्रक्रिया में विशेष बाधक है। इस दृष्टि से प्रौढ़ शिक्षा एक सम्पूर्ण क्रियात्मक प्रक्रिया है। इसके द्वारा व्यक्ति को साक्षर बनाने के साथ-साथ जीवन तथा व्यवसाय संबंधी ज्ञान भी दिया जाता है, जिससे उसकी कार्य प्रणाली का परिमार्जन हो सके।

आज इस बात की आवश्यकता है कि प्रौढ़ शिक्षा को सम्पूर्ण शैक्षिक कार्यक्रम के अंतर्गत देखा जाय। इस दृष्टि से प्रौढ़ शिक्षा उन सभी कार्यक्षेत्रों सें संबंद्ध हो, जो हमारे पिछड़े समाज की आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक आवश्यकताओं से जुड़े हों। इसके साथ ही प्रौढ़ शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों में लोगों के रहन सहन एवं सोच के स्तर में मूलभूत परिवर्तन लाने की चेष्टा की जाती है।

लोगों के जीवन-स्तर एवं सोच के तरीकों में गुणात्मक परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा की निरंतरता बनाये रखना भी आवश्यक है। सतत् शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत व्यावसायिक प्रशिक्षण, घर का रखरखाव, अप्रशिक्षित करीगरों के लिये प्रशिक्षण आदि शामिल हैं। महिलाओं को विकास के समान अवसर उपलब्ध कराने, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार और कार्य करने की बेहतर शर्तों का प्रावधान भी प्रौढ़ शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों में सम्मिलित है।

साक्षरता प्रसार के लिए आवश्यक है कि प्रौढ़ों को शिक्षा

के प्रति सही तरीके से उत्प्रेरित किया जाय। ग्रामीण तभी शिक्षा की उपयोगिता समझ सकेंगे जब वह उनकी आवश्यकताओं से जुड़ी हो। इस रूप में हमें प्रौढ़ों की मूलभूत आवश्यकताओं को उनकी शैक्षिक आवश्यकताओं में परिणत करना होगा। जैसे एक व्यापारी, कृषक और गृहिणी, इन तीनों के ही शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण और इनकी विकास आवश्यकताओं में अंतर होगा। इनकी शैक्षिक अपेक्षाएं भी भिन्न होंगी। आर्थिक और तकनीकी जानकारी देकर ही हम व्यवसाय विशेष में लगे प्रौढ़ों को शिक्षा के प्रति आकर्षित कर सकते हैं। यह कहा जा सकता है कि प्रौढ़ तभी संतुष्ट रह सकते हैं जब उनके कार्यों को सामाजिक सुरक्षा और प्रोत्साहन मिलता रहे। सामान्यत: हमारी मूलभूत आवश्यकताएं हमारी सामाजिक आवश्यकताओं से जुड़ी हैं। अत: शैक्षिक कार्यक्रमों की योजना बनाते समय इन सभी तथ्यों का ध्यान रखना आवश्यक है। यह देखा गया है कि प्रथम शैक्षिक आवश्यकताओं में प्रौढ़ आर्थिक लाभ तथा अपने गांव घर के विकास को लेते हैं।

यही कारण है कि प्रौढ़ शिक्षा-कार्यक्रम के तहत ग्रामीण यातायात, रहन-सहन, स्वास्थ्य-संबंधी ज्ञान, व्यावसायिक तथा परिवारिक प्रशिक्षण सभी का समावेश किया जाता है। इन कार्यक्रमों में व्यावसायीकरण के साथ ही साथ उनका कृषि से जुड़ा होना भी आवश्यक है। भारत कृषि प्रधान राष्ट्र है, अत: कृषि संबंधी आधुनिक ज्ञान द्वारा ही हम भूमि का पूरा लाभ ले सकते हैं। जीवन को अधिक सुविधापूर्ण, स्वस्थ और उन्नत बनाने के लिए प्रौढ़ शिक्षा आवश्यक है। शहरीकरण के बढ़ते प्रभाव के कारण ग्रामीणों की आर्थिक व सामाजिक आवश्यकताओं में बदलाव आया है।

शिक्षा का प्रसार : देश की जनता आज भी बड़ी मात्रा में निरक्षर है। उसे साक्षर करने के लिए हमें सरकारी योजनाओं के साथ स्वयंसेवी संस्थाओं की सेवाएं लेनी चाहिए। ग्रामीण स्तर पर औपचारिक शिक्षा का कार्यक्रम अपर्याप्त है। आर्थिक प्रगति के लिए प्रौढ़ों को साक्षर बनाना अत्यंत आवश्यक है। साक्षरता के साथ उन्हें कृषि संबंधी जानकारी व कुटीर उद्योग धंधों की व्यावहारिक शिक्षा भी दी जाए ताकि उन्हें लगे कि साक्षरता के द्वारा वे जीवन में कुछ न कुछ आगे बढ़ सकते हैं।

स्वास्थ्य सेवाएं : ग्रामीण जनों के लिए आधुनिक चिकित्सा व्यवस्था को और भी प्रभावी बनाया जाना चाहिए। ग्रामीण स्तर पर दी जाने वाली जन स्वास्थ्य सेवाओं में वृद्धि कर उन्हें और महत्वपूर्ण बनाया जाय। बच्चों के टीके और पौष्टिक आहार ग्रामीण अंचल में भी वितरित करने की व्यवस्था की जाय। विकास खण्ड में नियुक्त चिकित्सक को प्रति सप्ताह ग्राम में जाकर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करनी चाहिए। महिलाओं और पुरूषों के लिए परिवार कल्याण संबंधी सुविधाओं की अधिकाधिक जानकारी उपलब्ध करानी चाहिए। शिशु और माताओं पर ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

कृषि संबंधी जानकारी : ग्रामीण स्तर पर ही किसानों को कृषि संबंधी जानकारी देने की व्यवस्था की जाय, जिसमें विशेषकर कृषि यंत्रों का रखरखाव तथा प्रयोग, मिट्टी की जांच, उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग, कुटीर उद्योगों की जानकारी, मत्स्य पालन, पशु पालन, मधुमक्खी पालन, रेशम के कीड़े पालना, मुर्गी पालन, कीट पंतगों से फसलों की रक्षा, फलों की खेती आदि की जानकारी यदि किसानों को समय-समय पर दी जाती रहे तो न केवल उत्पादन बढ़ेगा बल्कि राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि होगी। इस कार्य की जिम्मेदारी योजना विभाग, विकास खण्ड अधिकारी तथा ग्राम पंचायतों को सौंप दी जाए। चुनाव प्रक्रिया में थोड़ा सा ग्राम स्तर पर परिवर्तन आवश्यक है। ग्राम प्रधान शिक्षित अथवा पढ़ा लिखा हो ताकि उसकी जागरुकता ग्राम विकास में सहायक हो।

इसके अलावा ग्राम पंचायत के कुछ अन्य कार्य हो सकते हैं : शुद्ध पेय जल की व्यवस्था, संपर्क मार्गों का निमार्ण, नालियों का निर्माण, परती भूमि पर पेड़ लगाना, ग्रामों में प्रकाश व्यवस्था, पशुओं के लिए चारागाह की व्यवस्था, सहकारी क्रय-विक्रय केन्द्र की स्थापना, ग्रामीण उद्योग धंधों का विकास, महिला शिक्षा को बढ़ाना, वृक्षारोपण को बढ़ावा देना, कंपोस्ट खाद निर्माण पर ध्यान देना, बायोगैस संयंत्रों को प्रोत्साहन देना, सिंचाई साधनों की व्यवस्था।

सरकार इस दिशा में कार्य कर रही है किन्तु लोगों की भागीदारी इसमें बहुत कम है। साक्षरता कार्यक्रमों द्वारा इन विकास कार्यक्रमों में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सकती है। दूसरे शब्दों में कहें तो पंचायतों की कारगर भूमिका को रेखांकित करने में साक्षरता कार्यक्रमों से आशातीत सहायता मिल सकती है।

उक्त उद्देश्यों की प्राप्ति पंचायतों के माध्यम से करने हेतु नए सिरे से सोचा जाना चाहिए। जब तक पंचायतों की सक्रिय भूमिका बनी रही कुल मिलाकर गांवों में सौमनस्य तथा धार्मिक उदारता

भी बनी रही। जातीय उदारता तथा "जीयो और जीने दो" जैसी संकल्पना मूर्त बनी रही। ग्राम स्तर पर ही समस्याओं के निबटान के कारण गांवों में स्थिरता बनी रही। राजधानी या केन्द्र में होने वाले परिवर्तनों से भी ग्राम व्यवस्था अप्रभावित रही। व्यक्ति की अस्मिता अक्षुण्ण रही। शिक्षा द्वारा नई चुनौतियों का सामना करने का विकल्प प्रस्तुत किया गया। साक्षरता प्रसार से चेतना तथा उपलब्ध व्यवसायों के द्वारा पंचायतों के कार्यक्षेत्र में निश्चित ही वृद्धि हुई है। उनके गठन में नए विचारों को स्थान दिया गया है तथा कुल मिलाकर प्रयत्न किया गया है कि वे स्थानीय आशाओं और आकांक्षाओं को रूपायित कर सकें। अधिक आय का विकल्प भी प्रस्तुत किया गया। शिक्षा प्रचार में पंचायतों का सहयोग ही नहीं लिया गया म. प्र. जैसे राज्यों में साक्षरता कार्यक्रम पंचायत विभाग द्वारा संचालित किए जा रहे हैं किन्तु ग्राम व्यवस्था के राजनीतिकरण से अनेक समस्याएं पैदा हुई है। इससे परस्पर संदेह की भावना का उत्पन्न होना सबसे चिंतनीय है। यह संदेह की छाया ही है जिसने ग्राम स्वराज्य तथा पंचायती राज व्यवस्था पर प्रश्न चिन्ह लगा दिए हैं। अभी भी बहुत देर नहीं हुई है, पंचायतों को इन दबावों से मुक्त किया जाए ताकि वे अपनी कारगर भूमिका संपादित कर सकें।

के-40 एफ, साकेत,
नई दिल्ली-110017

पंचायती राज : ग्राम स्वराज का श्रीगणेश

✍ कृष्ण वात्स्यायन

भारतीय ग्रामीण समाज की प्रमुख विशेषताओं में पंचायत राज का स्थान सर्वोपरि है। इसका इतिहास भी उतना ही पुराना है जितनी कि भारतीय सभ्यता। ग्राम-स्तर के प्रबंधन का यह मंच एक प्रकार से ग्राम्यसत्ता का पर्यायवाची कहा जा सकता है। पंच परमेश्वर की मान्यता प्रत्येक ग्रामीण के दिलो-दिमाग में कूट-कूट कर समायी हुई है। आधुनिक संदर्भ में हम इसकी तुलना कम्यून से कर सकते हैं। ब्रिटिश पद्धति में ऐसी ही व्यवस्था नोटीफाइड एरिया कमेटी, जिला-समिति, पालिका और नगर निगम में देखी जा सकती है। भारत में पंचायतों का ताना-बाना बहुत व्यापक और केन्द्रीय सत्ता से अप्रभावित रहा है। जिले में, नगर में या देश में किसी का भी शासन हो अथवा न हो, गांवों का कामकाज अनवरत चलता रहता था, लेकिन ब्रिटिश राज में पंचायत की मान्यता जब लुप्त हुई तो उसका वर्चस्व घटा जरूर किंतु समूल समाप्ति नहीं हुई। हम पाते हैं कि कुछ पंचायतें तब भी अपना काम करती रहीं और उनके निर्णयों की अवहेलना करने की शक्ति कोई व्यक्ति कभी न जुटा पाया - जैसे हरियाणा कि माहिम चौबीसी, सर्वखाप पंचायत वगैरह।

प्रथम प्रधानमंत्री स्व. जवाहरलाल नेहरू और महात्मा गांधी ने पंचायतों के अस्तित्व को पहचाना था तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस संस्था को पुर्नजीवित करने का जोरदार प्रयास किया था। केन्द्र में पंचायती राज एवं सामुदायिक विकास मंत्रालय की स्थापना की गई और श्री एस.के. डे को उसका मंत्री बनाया गया। इसके पीछे महात्मा गांधी के ग्राम-स्वराज की कल्पना जहां काम कर रही थी वहीं यह भी पाया गया कि लोकतंत्र की सबसे छोटी इकाई के रूप में पंचायत को विकसित किया जाए ताकि प्रत्येक ग्रामवासी अपने सामाजिक व राजनीतिक विकास में राष्ट्रीय मुख्य धारा के साथ-साथ चल सके और उसकी इन कामों में सक्रियता बढ़े। यह ग्राम स्तर पर निर्धनता के उन्मूलन में भी कारगर अस्त्र माना गया। उल्लेखनीय है कि 2 अक्तूबर 1959 को राजस्थान के नागौर में प., जवाहर लाल नेहरू ने पंचायती राज व्यवस्था की नींव रखी थी। उसके बाद इसने आन्दोलन का रूप जरूर ले लिया, लेकिन पंचायतों पर जो लोग अधिकार जमा बैठे उन्होंने हटने का नाम ही न लिया। चुनावों को बार-बार टाला गया। दशकों निकल गए और जनता कि दृष्टि में वे महत्वहीन हो गईं। यही हाल पालिकाओं और नगर निगम का हुआ। समय-समय पर पंचायतों व पालिकाओं के चुनाव कराने की बात चली जरूर लेकिन अमली जामा नहीं पहनाया जा सका।

यह दुर्भाग्य ही रहा कि हमारी इधर से उपेक्षावृत्ति इतनी बढ़ी कि 25 वर्षों तक उत्तर प्रदेश, पंजाब जैसे बड़े राज्यों में भी ये संस्थाएं महत्व खो बैठीं। फिर समय ने करवट ली। पूर्व प्रधानमंत्री स्व. राजीव गांधी ने जन सम्पर्क अभियान के दौरान अनुभव किया कि विकास की मद पर खर्च होने वाली रकम का 85 प्रतिशत इधर-उधर हो जाता है तथा आम आदमी के पल्ले एक रुपये में से केवल 15 पैसे पड़ते हैं। उन्होंने इस समस्या का समाधान पंचायतों के पुर्नगठन में निहित पाया। पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा देने की दरकार महसूस की गई। फलत: मई 1989 में पहली बार उन्होंने संसद में से संविधान संशोधन विधेयक (72-73) पेश किये। लोकसभा में तो ये पारित हो गए, लेकिन राज्य सभा में निहित स्वार्थों के कारण अटक गये। आम चुनावों में कांग्रेस सत्ताच्यूत्त हो गई। नए प्रधानमंत्री श्री वी.पी. सिंह की सरकार को समय ही न मिला या उन्होंने इसका महत्व नहीं समझा और दोनों विधेयक प्रवर-समिति को भेजे जाने की राह तकते रहे। अंततोगत्वा इन्हें पिछले वर्ष पुन: संसद में पेश किया गया। सभी की राय बनी कि ये संयुक्त प्रवर समिति के सुपुर्द किए जाएं। संयुक्त प्रवर-समिति ने मूल विधेयकों में कुछ संशोधन सुधार किया तथा गत वर्ष शीतकालीन सभा में 22-23 दिसम्बर को उनको संसद की स्वीकृति मिल गई।

उक्त विधेयकों के अनुसार पंचायतों के नियमित एवं निश्चित अवधि में चुनाव हुआ करेंगे। उनमें अनुसूचितों व जनजातियों का निश्चित प्रतिनिधित्व कोटा होगा। महिलाओं का प्रतिनिधित्व भी अब सुनिश्चित कर दिया गया है। इन पंचायतों के पास अब पर्याप्त वित्तीय व प्रशासनिक अधिकार होंगे। ग्राम-सभा इसकी सबसे छोटी इकाई होगी, पर उसे वे काम करने होंगे जो राज्यविधान सभा उनको सौंपेगी। पंचायती राज व्यवस्था विचारणीय है। (1) ग्राम (2) ग्राम समूह (3) जिला बीस लाख से कम जनसंख्या वाले राज्यों में ग्राम-समूह की व्यवस्था रखना जरूरी नहीं है। यह 62वें विधेयक का सारांश है। 63वां विधेयक नगरपालिका व नगर

निगमों के संबंध में है। इसकी व्यवस्था भी विचारणीय रखी गई है। इसमें भी अनुसूचित, जनजातियों एवं महिलाओं के प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित किया गया है। ये स्थानीय संस्थाएं भी वे कार्य निष्पादित करेंगी जो राज्य विधान मंडल उनको सौंपेगे। सबसे अहम् बात यह है कि महिलाओं को कुल प्रतिनिधियों के स्थानों में से एक तिहाई स्थान देने होंगे।

स्मरणीय है कि पिछले साढ़े तीन वर्षों के दौरान संसद में प्रस्तुत मूल विधेयकों पर विभिन्न मंचों पर कष्टदायक बहसें हुई और विभिन्न दलीलें पेश की गईं। विधेयकों के मूल प्रस्तावों की चीर-फाड़ की गई और कसौटी पर कसा गया ताकि विभिन्न राजनीतिक दलों की शंकाओं का निवारण हो सके। यह भी माना जा रहा है कि जो विधेयक पारित हुए हैं वे मूल प्रस्तावों की तुलना में बहुत लचर हैं, दंतहीन हैं। वस्तुत: जो राज्य सरकारें किसी भी कीमत पर अपने अधिकारों व दायित्वों का विकेन्द्रीकरण करने को उत्सुक नहीं हैं सबसे अधिक विरोध उन्हीं की तरफ से हुआ। अस्तु: पंचायत राज विधेयक पारित हो चुका है जिससे आम आदमी व्यवस्था के छोटे से छोटे स्तर तक एक व्यवस्था से जुड़ गया है। अब प्रश्न उसको अमली जामा पहनाने का है जो शायद इससे भी टेढ़ा काम है। अभी सभी विधानमंडलों को एतात्विषयक कानून बनाने हैं, तत्संबंधी प्रशासकीय और वित्तीय अधिकारों का निर्धारण करना है। राज्य सरकारों और केन्द्र की राजनीतिक स्थिरता से इसका सीधा संबंध है। अतएव अभी यह नहीं माना जा सकता कि देश में पंचायती राज व्यवस्था कायम हो गई है। उस दिशा में यह पहला कदम जरूर है।

सहायक सम्पादक, हिन्दुस्तान
निवास-117, मीनाक्षी गार्डन,
नई दिल्ली-110018

(पृष्ठ 27 का शेष)

के सदस्यों द्वारा होता है, जब कि गुजरात में अमरीका की तरह, सरपंच का चुनाव मतदाता स्वयं करते हैं। इसी प्रकार गुजरात में सहकारी प्रवृत्ति का नियंत्रण भी पंचायतों द्वारा ही होता है। पंचायती राज की यह विशेषता भी देश के अन्य राज्यों में शायद ही कहीं दृष्टिगत होती है।

गुजरात में पंचायती राज की प्रगति से संतुष्ट होकर स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने सम्पूर्ण भारत में सुव्यवस्थित ढंग से पंचायती राज की पुन:स्थापना का संकल्प व्यक्त किया था और तद्विषयक एक विधेयक भी संसद में प्रस्तुत किया था।

इस प्रकार भारत में पंचायती राज के पुनर्गठन में गुजरात का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पंचायती राज के सफल संचालन में गुजरात की गिनती 'एक आर्दश राज्य' के रूप में होती है। एक शब्द में कहें तो वह 'पंचायती राज' की गंगोत्री है।

'प्रीतदीप'
1, सिद्धार्थ टेनामेण्टस,
सत्य साईं स्कूल के निकट,
जामनगर - 361008 (गुजरात)

ग्रामीण बेरोजगारों हेतु रोजगार की चुनौतियां एवं सम्भावनायें

✍ डा. जगबीर कौशिक

बीस साल पहले हमने यह कल्पना भी नहीं की थी कि गांव के जिस पिछड़े स्वरूप को हम देख रहें हैं वह भी प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा। गांवों में बेरोजगारी का बोलबाला था। गांवों की गलियों, चौपालों आदि में बेरोजगार युवक अपना समय व्यतीत करते थे। किन्तु आज मीडिया के प्रचार-प्रसार एवं शहरों के सम्पर्क में आकर ग्रामीण क्षेत्र में भी जागृति आई है और रोजगार के अवसर बढ़े हैं। इतना सब कुछ होने के बावजूद भी रोजगार के अवसरों का लाभ उठाने वाले युवाओं में ग्रामीणों की प्रतिशतता बहुत कम है। इसका कारण उत्साह, लगन एवं धैर्य की कमी नहीं, अपितु उनके लिए निर्देशन का नितांत अभाव है। फिर भी आम राय यह है कि देश का ग्रामीण क्षेत्र सर्वाधिक रूप से पिछड़ा हुआ है। इस पिछड़ेपन के लिए व्यवस्था ज्यादा जिम्मेदार है। देश में ऐसे कानूनों और कार्यशैली को क्रियान्वित नहीं किया जा रहा है जिससे ग्रामीण क्षेत्रों का विकास जुड़ा हो। व्यवस्था के निर्धारकों का ध्यान ग्रामीण क्षेत्रों में बसी आबादी पर कम है। गांव से पढ़ लिख कर ऊंचे पदों पर बैठे लोग शहरों से घुलमिल गये हैं। इसलिए गांव की फटेहाली की तरफ उनका ध्यान नहीं जाता है। वे पूरी तरह शहरी बन चुके है और प्राय: गांवों को त्याग चुके हैं।

बारीकी से यदि देखा जाए तो देश का तथाकथित शहरी वर्ग कहीं न कहीं ग्रामीण क्षेत्रों से जुड़ा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों की समस्याओं से उनका परिचय गहरा है लेकिन आधुनिकता के अन्धे मोह से निकाह कर वे पूरी तरह शहरी हो गए हैं। गांव के भोले मिजाजी लोगों को वे अज्ञानी अथवा पिछड़ा समझते हैं। उनसे बातचीत करने तक में स्वयं की तौहीन समझते हैं। व्यवस्था की इन खामियों के रहते यह विश्वास करना गलत होगा कि इस परिवेश में ग्रामीण क्षेत्रों का समग्र विकास हो सकेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों से हाई स्कूल या इन्टरमीडिएट किए हुए युवकों को चाहिए कि वे शहरों की चकाचौंध अथवा तथाकथित उच्चशिक्षित ग्रामीण युवकों के शहरों के प्रति बढ़ते मोह का अंधानुकरण न करें बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में ही अपने लिए और अपने आश्रितों अथवा मित्रों के लिए रोजगार की सम्भावनाओं के प्रति स्वयं का ध्यान आकर्षित करें। मैट्रिक अथवा माध्यमिक शिक्षा के बाद वे किसी व्यक्ति अथवा संस्था का नौकर बनने की बजाय स्वरोजगार के प्रति उन्मुख हों। इस कार्य के लिए सरकारी स्तर पर उन्हें प्रोत्साहन और सहायता की व्यवस्था उपलब्ध है। ग्रामीण युवकों को चाहिए कि वे इस व्यवस्था का भरपूर लाभ उठाकर स्वयं के लिए रोजगार तैयार करें।

ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए सरकार ने वर्ष 1978 में केन्द्र द्वारा अनुदान प्राप्त योजना के तहत जिला उद्योग केन्द्रों का गठन किया है। उन केन्द्रों का दायित्व महाप्रबन्धक, कार्यकारी प्रबन्धक तथा परियोजना प्रबन्धकों को सौंपा गया है। जिला उद्योग केन्द्रों के तहत स्थापित उद्योगों को केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकार कुल व्यय का पचास प्रतिशत का अनुदान देती हैं। जिला स्तर पर लघु उद्योगों के विकास के लिए भारत सरकार ने यह क्रान्तिकारी कदम 1 मई 1978 को पहली बार उठाया था। आज देश के 422 केन्द्रों पर जिला उद्योग केन्द्रों द्वारा 831 जिलों में यह स्वरोजगार योजना चलाई जा रही है। देशभर में इस समय लगभग 440 जिले हैं। देश के महानगरों में लघु उद्योग केन्द्रों की स्थापना तो की गई है लेकिन इनकी योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए सौ फीसदी सहायता केन्द्रीय सरकार करती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि ग्रामीण युवक उद्योग विभाग की इस स्वरोजगार योजना का लाभ कैसे उठायें। सबसे पहले युवकों को यह निर्णय कर लेना चाहिए कि वे सिर्फ सरकारी सहायता के बल पर नहीं बल्कि मनोबल के बल पर इस दिशा में कदम रखें। ऐसे युवक इस क्षेत्र में बिल्कुल कदम न रखें जो नौकरी के रूप में रोजगार की उपलब्धता के कारण मजबूर होकर इस योजना में प्रवेश करना चाहते हैं। इसलिए जरूरी है कि लघु उद्योग तथा स्वयं के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के दृष्टिकोण से जो युवक मनोयोग से इस क्षेत्र में आना चाहते हैं सिर्फ वे ही इस योजना का लाभ उठायें। इसके लिए उस युवक को मनोयोग से काम करना होगा जिसके लिए उसे पहले ही मानसिक रूप से तैयार होना पड़ेगा।

जो ग्रामीण युवक ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योग खोलकर

रोजगार का साधन जुटाना चाहतें है, उन्हें तत्काल जिला उद्योग केन्द्र से सम्पर्क करना चाहिए। वे अपना उद्योग किस रूप में आरम्भ करना चाहते हैं और क्षेत्र में उस उद्योग की क्या संभावनाएं हैं आदि तथ्यों की बारीकी को समझकर ही उन्हें उद्योग की स्थापना के लिए कार्य करना होता है। वैसे जिस जिस क्षेत्र का वह रहने वाला है उस क्षेत्र में किस तरह के लघु उद्योग अधिक सफल हो सकते हैं और उनके लिए कच्चा माल तथा अन्य आवश्यक सहयोग किस स्तर पर तथा कहां-कहां से उपलब्ध हो सकते हैं इन विषयों से जुड़ी पर्याप्त जानकारी जिला उद्योग केन्द्र से उपलब्ध होती है।

मोटे तौर पर स्वयं उद्योग विभाग ने अपने जिला उद्योग केन्द्रों को ग्रामीण क्षेत्रों में क्या-क्या लघु उद्योग स्थापित किए जा सकते हैं, की सूची दे रखी है। इन सूचियों में ऐसे उद्योगों को स्थान दिया गया है जिनका बाजार सर्वत्र सुलभ तथा उद्योग की स्थापना आदि में समस्याएं अधिक न हों। इस सूची में अधिकांश ऐसे लघु उद्योगों की स्थापना की सलाह दी गई है जो आम जरूरत की वस्तुएं हों और जिनका भरपूर इस्तेमाल ग्रामीण क्षेत्रों में किया जाता है। सामान्य तौर पर विभाग ने इन लघु उद्यमों को तीन हिस्सों - रेड कैटेगेरी, ग्रीन कैटेगेरी तथा औरेंज कैटेगेरी में रखा है। रेड कैटेगरी में टायर-ट्यूब, बड़ी आटा चक्की, खाद्य तेल पिराई चक्की (बड़ी), स्टीम बायलिंग प्रोसेजेज तथा सिंथेटिक रहित साबुन की फैक्टरी, घरेलू तथा कार्यालयी उपयोग की वस्तुएं, ऑपटीकल ग्लास, पेट्रोल स्टोर तथा स्थानान्तरण सुविधा, बैक्री उत्पादन, पेट्रोलियम रिफाइनरी, खाद्य एवं औद्योगिक उपयोग का तेल, चीनी मिल, क्राफ्ट पेपर मिल, कास्टिक सोडा, रंग वार्निश आदि उद्योग हैं। औरेंज कैटेगेरी में फोटों फ्रेमिंग तथा दर्पण, कॉटन सिलाई तथा बुनाई, रेस्टोरेंट, साफ्ट ड्रिंक बोटलिंग प्लांट, स्टील फर्नीचर, लघु कपड़ा उद्योग, प्लास्टिक इंडस्ट्री, गन्ना रस की मशीन, डाई निर्माण उद्योग आदि जबकि ग्रीन कैटेगेरी में आटा चक्की, दाल मिल, मुंगफली छिलका निकालने की मशीन, टेलरिंग एवं गारमेंट, हैंडलूम बुनाई, शू-लेश उत्पादन, चमड़े के जूते-चप्पल, वाद्य यन्त्रों का निर्माण, खेल सामग्री, कार्डबोर्ड बाक्स, विज्ञान तथा गणित के उपकरण, कॉटन व प्लास्टिक की रस्सियों का निर्माण, कार्पेट बुनाई, खिलौने, मोमबत्ती, शीतगृह (लघु), पेपर पिन या यू- पिंस, चश्मे का फ्रेम, प्रिटिंग प्रैस, रबर आदि की वस्तुओं का निमार्ण होता है।

सूची बहुत लम्बी है जिसका अवलोकन जिला उद्योग केन्द्र पर आकर युवक कर सकते हैं। यह निर्णय उन्हें ही लेना होता है कि वे किस प्रकार का उद्योग स्थापित करना चाहेंगे। इन उद्योगों की स्थापना के लिए जिला उद्योग केन्द्र हर स्तर पर उद्यमी की सहायता की व्यवस्था भी करता है। यदि कभी-कभार कोई उद्योग क्षेत्र विशेष अथवा परिस्थिति विशेष या उद्यमी की विस्तृत योजना के कारण उद्योग केन्द्र की सामान्य अनुमानित लागत से ज्यादा बैठता है तो इसके लिए दूसरी संस्थाओं से भी वित्तीय सहायता की पर्याप्त संभावनायें है। कई बार ये केन्द्र उद्यमी को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से दूसरी संस्थाओं से उसे ऋण दिलाने की व्यवस्था भी करता है। इस आशय की पूरी जानकारी के लिए भी उद्यमी इन केन्द्रों से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं।

श्रमिकों की कुशलता को बढ़ाने के लिए जिला उद्योग केन्द्रों द्वारा विशेष कार्यशालाएं भी प्रायोजित की जाती है। ऐसी स्थिति में केन्द्र उन सभी उद्यमियों को कार्यशाला में सम्मलित होने का निमंत्रण देते हैं जो जिले में लघु उद्योग स्थापित किए रहते हैं। इन कार्यशालाओं से जहां उद्यमी की प्रबन्ध क्षमता को बढ़ाने के लिए सुझाव दिए जाते हैं वहीं उद्यमियों को क्षेत्र विशेष में कार्य कौशल का आंशिक प्रशिक्षण भी दिया जाता है। यह अलग बात है कि देश में अनेकों केन्द्रों पर लघु उद्योग संस्थान चल रहे हैं जिनमें उद्यमियों को बाकायदा प्रशिक्षण की व्यवस्था है। उद्यमियों को जिला उद्योग केन्द्रों से उद्योग स्थापना हेतु उपकरणों को खरीदने, उनकी उपलब्धता तथा अनुमानित लागत आदि की पूर्ण जानकारी दी जाती है।

सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए स्वयं जिला उद्योग केन्द्र के तहत उद्यमी को उन उत्पादनों की सूची भेजती है जिनकी खरीद सरकार स्वयं करती है। सरकार द्वारा खरीद के लिए आरक्षित उत्पादन की खरीद के कारण उद्यमी को फिर अपने उत्पादन को बेचने के लिए इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। उद्यमी कोटेशन के आधार पर सरकार को अपने उत्पाद बेचता है।

निस्संदेह लघु उद्योगों की स्थापना से देश का ग्रामीण क्षेत्र आत्मनिर्भर हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या को समाप्त किया जा सकता है और ग्रामीण क्षेत्रों के युवकों का गांवों से शहरों को पलायन रोका जा सकता है, लेकिन इस स्थिति के लिए सरकार को स्वयं विशेष रूप से आगे आना होगा। सरकारी अधिकारी अथवा सुरक्षा व्यवस्था के तहत इस बात से निपटने की पूरी कोशिश की जानी चाहिए कि कहीं उद्यमी को देश में व्याप्त भ्रष्टाचार की व्यवस्था का शिकार न होना पड़े। सरकार को चाहिए

कि वह लघु उद्योगों के विकास व विस्तार के लिए उद्यमियों की समस्याओं को सुनने के लिए विशेष कक्ष स्थापित करे ताकि उद्यमियों की शिकायतों पर कार्यवाही की जा सके।

ग्रामीण युवकों का दायित्व बनता है कि वे जिस गांव में पले पढ़े और बड़े हुए हैं उस गांव को खुशहाल बनाने में अपनी भूमिका निभायें। यह सही है कि भूमिका का निर्वाह काफी जटिल है लेकिन उद्योग विभाग की नीतियों ने इस जटिलता को अत्यन्त लचीला बना दिया है जिसका पूरा-पूरा लाभ ग्रामीण युवकों को उठाना चाहिए और लघु उद्योगों की स्थापना के क्षेत्र में कदम रखना चाहिए।

एक बात और विशेष रूप से ध्यान देने की है यदि किसी कारणवश लघु उद्योग बीमार हो जाता है तो उद्यमी क्या करे? इसके लिए जरूरी है कि उद्यमी अपना सन्तुलन न खोये। वह घबराये बिना उद्योग के बीमार होने के कारणों पर विचार करे। इस स्थिति से निपटने के लिए जिला उद्योग केन्द्र के परियोजना अधिकारी से भी विचार-विमर्श कर सकता है और उन मूलभूत कारणों को ढूंढ सकता है जिसके कारण उद्योग के बीमार होने की नौबत आई है। ऐसी स्थिति में ही उद्यमी की लगन और उत्साह की परीक्षा होती है।

ग्रामीण क्षेत्रों के युवकों को चाहिए कि वे पलायन की भावना को छोड़ कर ग्रामीण क्षेत्रों में ही अपने उज्ज्वल भविष्य की राह तलाशें। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार की पर्याप्त सम्भावनायें उपलब्ध हैं बस जरूरत उन्हें सिर्फ बारिकी से देखने, विचारने और क्रियान्वित करने की है।

586-जी, पाना उद्यान,
नरेला, दिल्ली-110040

(पृष्ठ 5 का शेष)

विधेयक में राज्य सरकारों को अधिकार दिया गया है कि वे वित्त आयोग गठित करे और राज्य के मुख्य चुनाव अधिकारी के अन्तर्गत पंचायतों के नियमित चुनाव की व्यवस्था करे। इससे इस विधेयक का स्वरूप पूर्णत: जनतांत्रिक व उत्तरदायी हो गया।

प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिंह राव ने हाल में तमिलनाडु में राजीव गांधी की प्रतिमा का अनावरण करते हुए कहा "ग्राम पंचायतों को सुदृढ़ व प्रभावी बनाने के लिए राजीव गांधी ने जो संकल्प किया था, उसे पूरा किया जायेगा।" श्री नरसिंह राव ने गत 30 जनवरी को राजधानी में वरिष्ठ अधिकारियों को संबोधित करते हुए कहा है कि अधिकारियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि किसी कठिन निर्णय से आम आदमी को कष्ट न हो। उन्हें सर्वाधिक गरीब व्यक्तियों के हितों का ध्यान रखना चाहिए। पंचायती राज की नई व्यवस्था लागू करते समय संबंधित अधिकारियों को प्रधानमंत्री की उपर्युक्त सलाह ध्यान में रखनी चाहिए, अन्यथा पंचायत राज्य के उद्देश्य पूरे नहीं होंगे।

दिसम्बर 1992 में संसद द्वारा सर्वसम्मति से पारित इस संविधान संशोधन विधेयक पर यदि ईमानदारी और दृढ़ता के साथ अमल किया गया तो जनतंत्र की जड़ें गांव तक पहुंचेंगी। आशा है कि नई पंचायतें ग्रामीण क्षेत्रों में सत्ता संतुलन में भी परिवर्तन करेंगी। परन्तु गांवों की जनता की आर्थिक सामाजिक मुक्ति और उसके विकास के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं होगा। गांवों के प्रति पूरी सोच बदलनी होगी। व्यापक भूमि सुधार करके गरीब किसानों और खेत मजदूरों को भूमि देकर तथा ग्रामीण क्षेत्रो में ग्रामोद्योग खोलकर और पानी, शिक्षा, चिकित्सा आदि सुविधाओं को उपलब्ध कराकर हम गांवों का जीवन खुशहाल बना सकते हैं।

यदि हम ऐसा कर सकें तो महात्मा गांधी के 'दरिद्रनारायण' के चेहरे पर मुस्कान आ सकेगी और स्वाधीनता सेनानियों व शहीदों के सपने कुछ हद तक पूरे होंगे।

बी-55 गुलमोहर पार्क,
नई दिल्ली-110049

ऊसर में फलदार वृक्ष लगाइए

गंगाशरण सैनी

उपलब्ध आकंड़ों के अनुसार भारत में लगभग 70 लाख हेक्टेयर भूमि ऊसर ग्रस्त है। अकेले उत्तर प्रदेश में 1959 में 13 लाख हेक्टेयर भूमि ऊसर थी, जिसमें प्रति वर्ष 20,000 हेक्टेयर की दर से वृद्धि हो रही है। यह अनुमान लगाया जा रहा है कि इस शताब्दी के अन्त तक भारत की जनसंख्या एक अरब के लगभग हो जायेगी। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रति वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में जनसंख्या का दबाब निरन्तर बढ़ता जा रहा है, जो कि हमारी प्रगति का भागीदार न होकर हमारी गरीबी का भागीदार हो रहा है। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ पर्यावरण भी दूषित होने लगता है जिसके कई कारण हो सकते हैं इनमें प्रमुख हैं :- (1) वनों की अन्धाधुन्ध कटाई (2) उद्योग धन्धों के फैलाव से कार्बन डाईआक्साइड की वृद्धि (3) हानिकारक पदार्थों की भरमार (4) विषैले कीटनाशक रसायनों का कृषि क्षेत्र में उपयोग आदि।

भारत में जो भी अच्छी और उपजाऊ भूमि है उसका कृषि में उपयोग कर लिया है और उस पर आधुनिक तरीकों का उपयोग करके अधिक से अधिक पैदावार ली जा रही है। बढ़ती हुई जनसंख्या के पोषण के लिए हमें ऊसर भूमि को कृषि एवं बागवानी योग्य बनाकर हमें अतिरिक्त उपज बढ़ाकर देश की इस समस्या का समाधान कर सकते हैं। लवणीय मृदाओं का केवल एकान्तर उपयोग यह है कि इनमें फलों की खेती की जाए। इस में इस बात का ध्यान रखना होगा कि ऐसे कठोर लवण सहय फलों का सावधानी से चयन किया जाए और उनके लिए कृषि प्रोद्यौगिकी का मानकीकरण किया जाए। इन बातों को ध्यान में रखते हुए लवण ग्रस्त मृदाओं के समुचित उपयोग की यहां पर कुछ प्रमुख बातों का उल्लेख किया गया है जिन का ध्यान रखकर इन मृदाओं में सफल फलोत्पादन का कार्य किया जा सकता है:

प्रजाति का चयन :

लवण प्रतिबल (साल्ट स्ट्रेस) परिस्थितियों में कई फल भली भांति उगाये जा सकते हैं। लवण सहनशीलता की क्षमता के आधार पर फलों को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है, जिस का उल्लेख सारणी-1 में किया गया है।

सारणी - 1

लवण प्रतिबल परिस्थितियों में फलों का चयन

समुह	*पी.एच.मान*	*ई.एस.पी*	*ई.सी.ई.डी.एस.एम*	*फलवाली फसलें*
1. कम सहनशीलता	7.5-8.5	20-30	6-9	अमरूद, बेल, बारबडोज, चेरी, कुछ अंगूर की किस्में
2. मध्यम सहनशीलता	8.5-9.5	30-40	9--12	आंवला, अनार, फालसा, शरीफा, अंजीर, शहतूत, करौंदा
3. अधिक सहनशीलता	9.5-10.5	40-50	12-15	खजूर, बेर, इमली, जामुन, लसौड़ा, वुड एपिल

ऊसर भूमि में विभिन्न प्रकार के फलों की निम्न प्रजातियां सुगमता से उगायी जा सकती हैं:-

1. अमरूद - लखनऊ 49, इलाहाबाद सफेदा
2. बेर - बनारसी कडाका, गोला, मुडिया, महारा
3. आंवला - प्रताप गढ़, चकैइया, बनारसी, कंचन, एन ए-7
4. नींबू - सीडलैस, देशी, कागज़ी
5. अंगूर - ब्यूटी सीडलैस

भूमि की तैयारी

फल के पौधे लगाने के लिए कम से कम एक मीटर गहराई तक भूमि का सुधार आवश्यक है। यदि भूमि में कठोर परत है, तो उसका तोड़ना नितान्त आवश्यक है। अत: ऐसी भूमि में फलों की खेती करने के लिए गड्ढे तैयार किए जाते हैं, ताकि पूरे क्षेत्र को कम खर्चे पर सुधारकर सुगमता से खेती की जा सके।

गड्ढों की तैयारी

1मी.×1मी. ×1मी. आकार के गड्ढे एक दूसरे से 7 से 10 मीटर की दूरी पर खोदे जाते हैं, उनकी सतह में 3 किलोग्राम जिप्सम या पायराईटर बखेर कर गड्ढों को 1:1:1 में उपजाऊ मिट्टी, गोबर की खाद या कम्पोस्ट और बालू रेत भर दिया जाता है, उसके उपरान्त इन गड्ढों में पानी भर दिया जाता है। उसके उपरान्त वर्षा ऋतु में फलों की पौध गड्ढों के मध्य में रोप दी जाती है।

पौधों की उपलब्धता

ऊसर भूमि में लगायी जाने वाली पौध को अच्छी भूमि में तैयार करना चाहिए। यही अच्छी भूमि उपलब्ध न हो, तो पोलीबेग में पौधे तैयार करने चाहिए। यदि पौध स्वयं तैयार करने में कठिनाई हो, तो उस स्थिति में किसी प्रमाणित नर्सरी से पौधे खरीदें। वैसे फलों की पौध जिला उद्यान अधिकारी के माध्यम से भी खरीदी जा सकती है। इसके अलावा सर्वोतम किस्म की पौध भारतीय राज्य फार्म निगम के फार्मों से भी प्राप्त की जा सकती है।

रोपाई उचित समय पर करें

फल वृक्ष के पौधे लगाने का सर्वोत्तम समय जुलाई-अगस्त है, वैसे पौधे वंसत ऋतु (फरवरी-मार्च) में भी लगाये जा सकते हैं, परन्तु इस समय रोपे गये पौधों को अप्रैल-मई की गर्मी का सामना करना पड़ता है और सिंचाई की समुचित व्यवस्था के बावजूद भी पौध मरने का भय रहता है। अत: इन क्षेत्रों में रोपाई जुलाई-अगस्त में ही करें।

पौध की रोपाई

पौधे की मिट्टी सहित उपरोक्त विधि से तैयार गड्ढे में लगा देना चाहिए। पौधे रोपने के तुरन्त बाद पानी दे देना चाहिए, ताकि पौधे भली भांति स्थापित हो सकें। सामान्य मृदा की तुलना में ऊसर पौधों की बढ़वार धीमी गति से होती है अत: इसके लिए खेत के सारे क्षेत्र में रोपड़ के लिए समीप रोपड़ पद्धति अपनानी चाहिए।

फिलर/अन्त: फसल

आमतौर पर फल वृक्ष फूलने व फलने में अधिक समय लेते हैं। अधिकांश फलदार वृक्षों से 5 साल के भीतर फल लिया जा सकता है। अत: खाली भूमि का सदुपयोग करके लाभ उठाया जा सकता है। कहने का अभिप्राय यह है कि खाली भूमि में फिलर (अन्त: फसलें)उगानी चाहिए। ऐसा करने के लिए 'फसलीय माडलों' का उपयोग करना चाहिए। ऐसा करने से न केवल अतिरिक्त आमदनी होगी बल्कि मृदा की परिस्थितियों में भी सुधार होगा। कुछ फसलीय माडलों का उल्लेख नीचे किया गया है :

आंवला+बेर+करौंदा

आंवला+बेर+फालसा

आंवला+अमरूद+करौंदा.

आंवला+अमरूद+फालसा

आंवला+अनार+करौंदा

आंवला+अनार+फालसा

उपरोक्त वर्णित फलों को उगाने से मृदा की उर्वरता में भी वृद्धि होगी और खरपतवारों पर नियंत्रण भी हो जायेगा। ढैचा को उगाकर खेत में ही दबा देने से भी मिट्टी की भौतिक रसायनिक एवं जैविक स्थिति में सुधार होता है।

लवण प्रभावित मृदाओं की संरचना

इनकी संरचना अच्छी नहीं होती है, जिसके कारण उनकी जलधारण क्षमता कम होती है। अत: पौधों की मीठे जल से हल्की और जल्दी जल्दी सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई नालियों द्वारा वृक्ष के चारों ओर निर्मित थामलों में करनी चाहिए। इन क्षेत्रों के लिए ड्रिप/छिड़काव प्रणाली सिंचाई के परम्परागत ढंग से अधिक लाभप्रद पाई गयी है, किन्तु इस प्रणाली में प्रारम्भिक व्यय अधिक होता है, जो एक साधारणकृषक के बस की बात नहीं है, हालांकि सहकारी रूप से यह प्रणाली अपनायी जा सकती है इसमें

व्यावसायिक बैंकों से ऋण भी प्राप्त किया जा सकता है।

उर्वरक डालना

इन मृदाओं में जैविक पदार्थ की कमी होती है अत: इनके लिए सिफारिश की गई मात्रा की 1/3 मात्रा गोबर की खाद या कम्पोस्ट के रूप में दी जानी चाहिए। ऐसा करने से मृदा संरचना में सुधार, जल धारण क्षमता और अन्त: संचरण दर में वृद्धि होगी। इसके साथ साथ उनका पोषण स्तर भी बढ़ेगा। इन मृदाओं के लिए नाइट्रोजन के लिए अमोनियम सल्फेट, फॉस्फोरस के लिए सिंगल सुपर फॉस्फेट और पोटेशियम के लिए पोटेशियम सल्फेट को वरीयता देनी चाहिए हालांकि इन मृदाओं में कुछ पोषक तत्व काफी मात्रा में विद्यमान होते हैं भूमि के विषैले/विपरीत प्रभाव के कारण वे पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। मृदा प्रतिबल परिस्थितियों में यह सिफारिश की जाती है कि पोषक तत्वों को कभी भी छिड़काव विधि से नहीं देना चाहिए।

देखभाल

पौधों की मांग के अनुसार और मौसम को ध्यान में रखकर पौधों की समय समय पर सिंचाई करना नितान्त आवश्यक है अन्यथा पौधों का समुचित विकास नहीं हो पायेगा। हर दो सिंचाई के उपरान्त निराई-गुड़ाई भी उतनी ही आवश्यक है। जिससे मिट्टी के अन्दर हवा का आगमन बना रहे और पौधों की निरन्तर वृद्धि होती रहे। ऊसर भूमि में पानी देते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पानी पौधों की जड़ों के अधिक से अधिक समीप दिया जाए, ताकि उस मेल लवणीय भूमि से न हो सके। अत: ऊसर भूमि में यदि सिंचाई ड्रिप से की जाए, तो सब से उपयोगी होगा। बहाव विधि से सिंचाई करने से ऊसर भूमि के लवण पौधे की जड़ में पहुंचकर पौधों को क्षति पहुंचायेंगे।

पौधों को कोई रोग या कीट तो क्षति नहीं पहुंचा रहा है, इस बात का ध्यान रखना नितान्त आवश्यक है। इसके लिए प्रति सप्ताह एक बार पौधों को अवश्य परखें। यदि किसी रोग या कीट का प्रकोप हो जाए तो अपने क्षेत्र के पौध संरक्षण अधिकारी से संपर्क करके आवश्यक रसायन का छिड़काव करें।

उपज

पौध रोपाई के बाद भली-भांति देखभाल करने पर 3-5 वर्ष में फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं। उस समय उपज कम होती है, परन्तु 8-10 वर्ष में अधिक फल लगते हैं तब बेर के एक पौधे 60-80 किलोग्राम, अमरूद 50-60 किलोग्राम, आंवला 50 किलोग्राम, नीबू 20-25 किलोग्राम फल देते हैं। बाग में किया गया व्यय 6-8 वर्ष के अन्दर मालिक को मिल जाता है और उसके बाद होने वाली वार्षिक आमदनी रख रखाव से कहीं अधिक होगी। पांच सदस्यों के परिवार का मालिक एक हेक्टेयर बाग द्वारा अपनी जीविका सुगमता से चला सकता है।

विपणन और उपयोग

फलों को पौष्टिक आहार के रूप में खाने के काम में लाया जाता है। आज के आधुनिक युग में फलों की डिब्बाबन्दी करके एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जाता है, ताकि देश-विदेश के हर कोने में एवं पूरे वर्ष फलों का उपयोग किया जा सके। परीक्षण इकाइयों द्वारा फलों से जैम, जैली, रस व दूसरे अन्य खाद्य पदार्थों का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार बाग के मालिकों को अच्छा भाव मिल जाता है और उपभोक्ताओं को खाने के लिए सदैव पोष्टिक आहार मिल जाता है। आजकल ताजे फलों और संबधित पदार्थों का विदेशों को निर्यात किया जाता है जिससे विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है। इससे हमारे देश की आर्थिक स्थिति में निश्चय ही सुधार होगा। ग्रामीणों को रोजगार मिलेगा और उन्हें पौष्टिक फल भी खाने को मिलेंगे।

संयुक्त संपादक 'फसल सन्देश'
1023- टाइप 4, एन.एच.-4,
फरीदाबाद-121001

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल) 12057/93
पूर्व भुगतान के बिना डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DL) 12057/93
Licenced under U (DN) 55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

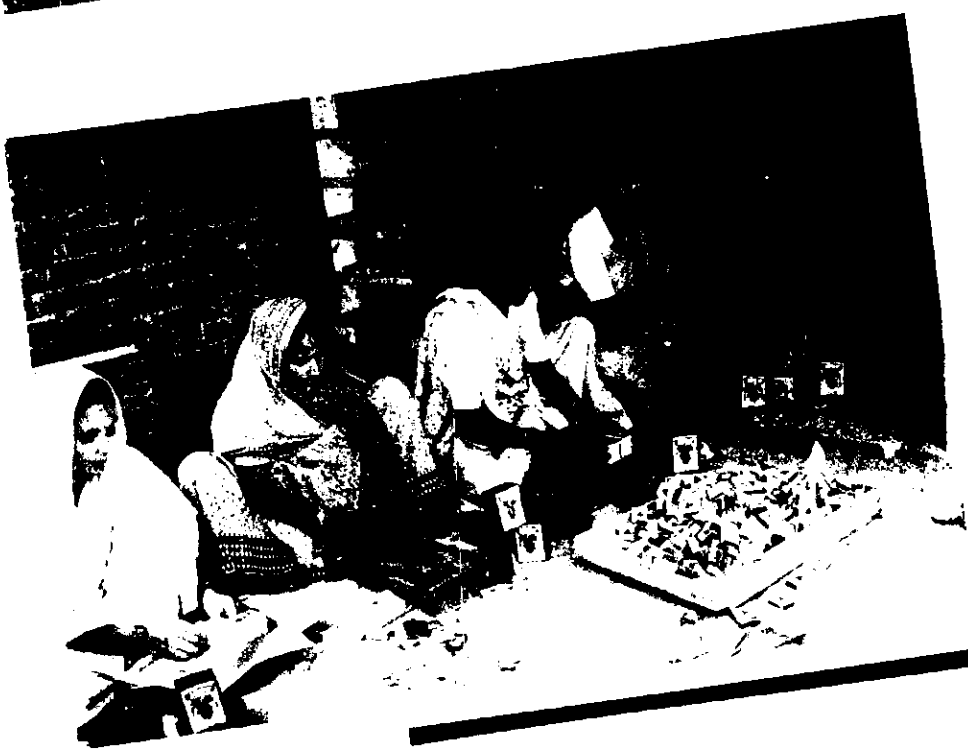

डा. श्याम सिंह शशि. निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित